RNI Reg No MPHIN/2007/27127

ISSN: 3048-9954 (Print)

अहिंसा, आगम और विज्ञान से आलोकित श्रेष्ठतम पत्रिका

भाव विज्ञान

BHAV VIGYAN

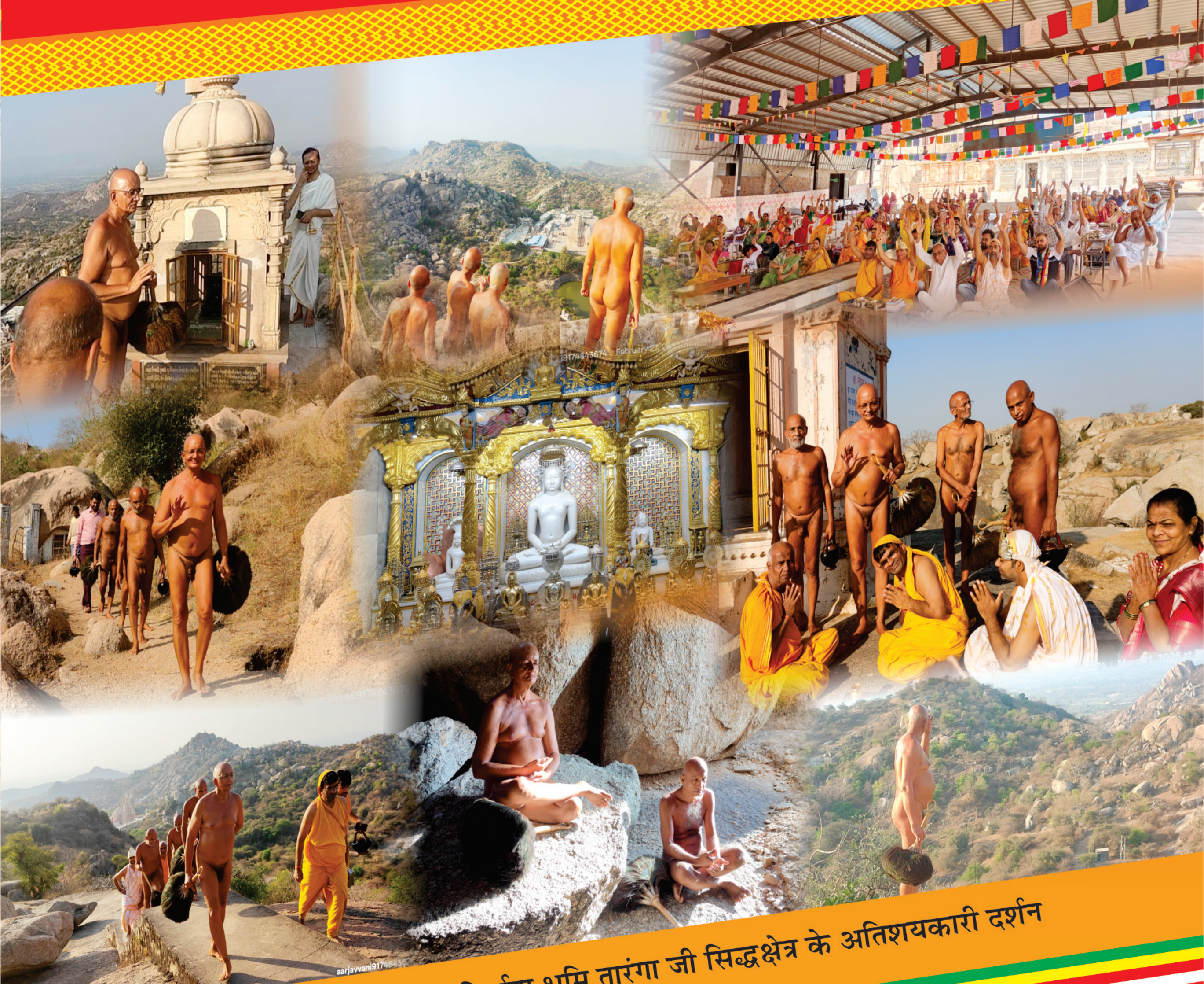

साढ़े जीन करोड़ मुनियों की निर्वाण भूमि तारंगा जी सिद्धक्षेत्र के अतिशयकारी दर्शन

वीर निर्वाण संवत् - 2552

चैत्र शुक्ल, वि.सं. 2083, मार्च 2026

अंक : पचहत्तर

वर्ष : बीस

बही पार्श्वनाथ, मंदसौर मे गुरु सान्निध्य में निकाली गई रथयात्रा; हुआ ऐतिहासिक कार्यक्रम।

बागीदौरा (राज.) में ॐ योग ध्यान कराते हुये आचार्य भगवन् श्री आर्जवसागर जी गुरुदेव।

नौगामा बागड़ स्थित छोटा सम्मेदशिखर जी की वंदना करते हुये गुरुदेव ससंघ।

बाँसवाड़ा नगर समीपस्थ वीरोदय क्षेत्र का अवलोकन करते हुये आचार्य भगवन् ससंघ।

आचार्य भगवन् का मंगल आशीर्वाद प्राप्त करते हुए कैलाशचंद जी-हिमांशु जी सपरिवार गुडगाँव-गुरुग्राम (हरियाणा)।

भीलोड़ा के बावन जिनालय स्थित अतिशयकारी जिनबिम्बों के दर्शन करते हुये गुरुदेव ससंघ।

आचार्य भगवन् के 2026 के पावन चातुर्मास एवं सिद्धचक्र मण्डल विधान हेतु निवेदन करते हुए तारंगा सिद्धक्षेत्र कोठी मंदिर की कमेटी।

बाँसबाड़ा में शीतकालीन प्रवास हेतु श्रीफल भेंट करते हुये कमेटीगण सहित श्रद्धालुगण।

विषय : धार्मिक पत्रिका | प्रथम प्रकाशन वर्ष : 2007 | भाषा : हिन्दी | प्रारूप : अहिंसा एवं जैन धर्म से संबंधित आलेख
RNI Reg No MPHIN/2007/27127 ISSN: 3048-9954 (Print)

त्रैमासिक

भाव विज्ञान

(BHAV VIGYAN)

वर्ष-बीस
अंक - पचहत्तर

पल्लव दर्शिका

विषय वस्तु एवं लेखक		पृष्ठ
1. संपादकीय	-डॉ. अजित कुमार जैन	2
2. आचार्य आर्जवसागर रचित सम्यक् ध्यान शतक में ध्यान के भेद-प्रभेद एवं धारणाएँ	-डॉ. सत्येन्द्र कुमार जैन	4
3. आचार्य श्री आर्जवसागर जी के साहित्य में आध्यात्मिक चिंतन	-डॉ. सरिता जैन दोशी, इंदौर	7
4. एक सर्वोत्तम एवं अनुपम कृति ''अंतादि शतक'' सूक्ति काव्य	-डॉ. अजित कुमार जैन	17
5. आचार्य श्री आर्जवसागर जी महाराज की कविताओं में देश, समाज व जनहित की भावनाएँ	-मनोज जैन निडर, पिड़ावा	21
6. आयुर्वेद का सार- सदाचार सूक्ति काव्य	-डॉ. जिज्ञासा जैन, अशोकनगर	28
7. सम्यक् ध्यान शतक	-प्रीति अजमेरा, गया, बिहार	32
8. समाचार		37

आशीर्वाद व प्रेरणा
संत शिरोमणि आचार्यश्री 108
विद्यासागरजी महाराज से दीक्षित
आचार्यश्री 108 आर्जवसागर जी महाराज।

• परामर्शदाता •
प्राचार्य डॉ. पं. शीतलचंद जैन, जयपुर मो. 9414783707
प्रो. डॉ. ऋषभचंद जैन, एकलव्य यूनिवर्सिटी, दमोह मो.: 9431441951

। सम्पादक ।
डॉ. अजित कुमार जैन
MIG-8/4, गीतांजली काम्प्लैक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल-462003 मो. : 7222963457, व्हाट्सएप: 9425601161
email : drajitjn@aarjavvani.com

• प्रबंध सम्पादक •
इंजी.बहिन ऋषिका जैन,
आर्जव छाया, पारस नगर, सागर नाका, दमोह (म.प्र.) 470661; मो. 9174843674
email : brrisheekajn@aarjavvani.com

• संपादक मंडल •
कुलपति डॉ. वी.के. जैन, सह-संपादक, तीर्थंकर महावीर यूनिवर्सिटी, दिल्ली रोड, मुरादाबाद (उ.प्र.) मो.: 9997692191
email : drvkjn@aarjavvani.com

प्रोफेसर. डॉ. सुधीर जैन, सह-संपादक
85, डी के कॉटेज, बावड़ियाकला, भोपाल
email : profdrsudhirjn@aarjavvani.com

पं. जय कुमार 'निशांत', सह-सम्पादक
पपोरा चौराहा, टीकमगढ़
email : ptjaynishant@aarjavvani.com

डॉ. संजय जैन (एडवोकेट), सह-संपादक
179, समर्थ सिटी-1, गोम्मटगिरी के पास, इंदौर-459112
email : drsanjayjn@aarjavvani.com

डॉ. श्रीमती अल्पना जैन (मोदी), सह-सम्पादक
गणेश कॉलोनी, नया बाजार, ग्वालियर-474009
email : dralpnamodi@aarjavvani.com

इंजी. महेन्द्र कुमार जैन, सह-संपादक
132, डी के कॉटेज, बावड़ियाकला, भोपाल-462039
email : engmahendrajn@aarjavvani.com

• प्रकाशक •
श्रीमती सुषमा जैन धर्मपत्नी डॉ. अजित जैन
MIG-8/4, गीतांजली काम्प्लैक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल-462003 मो.: 9479978084
email : sushmajn@aarjavvani.com

वेब साइट : www.aarjavvani.com
email : bhav.vigyan@aarjavvani.com

लेखक एवं उनके विचारों से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।
भाव विज्ञान से संबंधित समस्त निर्णयों/न्यायों के लिए न्याय क्षेत्र भोपाल ही मान्य होगा।

सम्पादकीय

-डॉ. अजितकुमार जैन, सम्पादक

जैसे एक ही घटना दो विभिन्न व्यक्तियों के जीवन में घटित होती है किंतु दोनों की प्रतिक्रियाएं, दोनों के अनुभव सर्वथा भिन्न होते हैं । जहां एक व्यक्ति इस घटना से टूटकर अशांति का अनुभव करता है, वहीं दूसरा व्यक्ति इस घटना से उभरते हुए शांति का अनुभव करता है । ऐसा क्यों होता है? इसका मूल कारण है कि हमारा जीवन बाह्य घटनाओं से उतना प्रभावित नहीं होता है जितना कि हमारे आंतरिक भावों के प्रभाव से आकार लेता है । शरीर तो एक साधन, एक रथ की भांति है। मन उस रथ का सारथी हो सकता है, किंतु भावना वह अदृश्य लगाम है, वह असीम शक्ति है जो आत्मा रथी को वास्तविक दिशा प्रदान कर उसके गंतव्य का निर्धारण करती है। यह भावना ही है जो हमें उर्धगामी या अधोगामी बनाती है। जैसे एक छोटा सा बीज अपने भीतर एक विशाल फलदार वृक्ष की समस्त संभावनाओं को छुपा कर रखता है, ठीक वैसे ही हमारे जीवन में प्रत्येक भाव हमारा भाग्य, चरित्र, व्यक्तित्व और जीवन की समग्र गति, यहां तक कि हमारी आगामी योनियां भी सूक्ष्म रूप में समाहित हैं। भाव आखिर क्या करता है और जिसका कार्य क्षेत्र कितना व्यापक है? भाव वह प्रेरणा है जिससे भावना, हमारे सूक्ष्मतम विचारों के अंकुरण से, हमारी वाणी के माध्यम से प्रकटीकरण और हमारे स्थूल व्यवहार और कर्मों के रूप में उनके परिणाम तक, प्रत्येक स्तर पर संचालित और निर्देशित करता है। प्रत्येक स्थूल कर्म के पीछे भाव कर्म अर्थात् भावना से प्रेरित एक सूक्ष्म मानसिक कर्म होता है यही भाव कर्म आत्मा के साथ कर्म पुद्‌गलों के चिपकने का मूल कारण होता है । शुभ भाव पुण्य कर्मों का बंध करते हैं और अशुभ भाव पाप कर्मों का । यह संचित कर्म ही भविष्य में सुख-दुःख के रूप में फल देते हैं । यही भावों का विज्ञान है।

एक विशुद्ध भावना जहाँ मनुष्य को देवत्व की सर्वोच्च ऊंचाइयों तक पहुंचाती है, अनंत सुख और शांति प्रदान करती है। वहीं दूसरी और इसके विपरीत एक मलिन भाव पशु योनि (तिर्यञ्च गति) में पहुँचाती है जहाँ अविवेक और पराधीनता है और यही तीव्र कषाय युक्त भाव नरक की असहनीय यातनाओं का पात्र बनाता है जहाँ केवल दुःख ही दुःख है।

तीव्र व प्रबल क्रोध भाव से कटु और अपमानजनक एवं लोभ के भाव से धूर्तता भरे शब्द निकलते हैं, ब्लड प्रेशर तत्काल बढ़ जाता है, नसें फड़कने लगती हैं, चेहरा तमतमा जाता है, भय के भाव से हार्ट रेट बढ़ जाती है, शरीर कांपने लगता है, पसीना आ जाता है, निरंतर चिंता और शोक से पाचन क्रिया बिगड़ जाती है, अनिद्रा रोग हो जाता है। नकारात्मक भाव जैसे घृणा, ईर्ष्या और प्रतिशोध मन में निरंतर अवसाद, अशांति व निराशा को जन्म देते हैं और मानसिक संतुलन बिगड़ जाता है। जिससे मोटापा, ब्लड प्रेशर, मधुमेह (Diabetes), अनिद्रा, कैंसर, किडनी आदि-आदि की गंभीर बीमारियों का कारण बनते हैं। जबकि इसके विपरीत, प्रेम आनंद और शांति का मधुर, प्रिय शब्दों के भाव शरीर में स्वस्थ और फिटनेस एवं रोग प्रतिकारक क्षमता को बढ़ाता है। ये सभी सकारात्मक भाव जैसे संतोष, कृतज्ञता, उत्साह मन को प्रसन्न, शान्त और ऊर्जावान बनाता है जिससे एकाग्रता और निर्णय करने की क्षमता वृद्धिंगत होती है।

सरल और सत्य भाव से पवित्र शब्द बनते हैं । हमारे भाव हमारे पारस्परिक संबंध की नींव, मैत्री और प्रेम के भाव सहयोग और सोहार्द को जन्म देते हैं । जिससे परिवार और समाज में मधुरता आती है । घृणा और अहंकार के भाव से संघर्ष और बिखराव पैदा होता है, रिश्ते टूटते हैं और अशांति फैलती है।

भाव विज्ञान पत्रिका का एक उद्देश्य यह भी है कि भावों को कैसे सहज, संयत, निर्मल, सकारात्मक, शांत, संयमित, और पवित्र बनाया जाए? जिससे राग, द्वेष, मोह, क्रोध, मान, माया, लोभ, नकारात्मकता आदि को इन पवित्र भावनाओं के माध्यम से मंदतम स्तर पर रखा जा सके ।

गुरु-सन्निधि

-आचार्य श्री आर्जवसागर जी

पारसमणि जब लोह को, स्वर्ण बनाती जान।
गुरु-सन्निधि हि भव्य को, शुद्ध बनाती मान॥ 1॥

जप-माला गुरु हाथ में, लेकर जपते नाथ।
गुरु-हस्त आशीष पा, जाप मिले, गुरु साथ॥ 2॥

धर्म-पुस्तिका हाथ ले, गुरु पढ़ते शुभ-काल।
धर्म-लेख की लेखनी, पा भवि मालामाल॥ 3॥

शुचिता हेतु हाथ में, रहे कमण्डल साथ।
छूते भवि जब उपकरण, पुण्य बढ़े दिन रात॥ 4॥

संयम पालें पिच्छि से, करते जीव सम्हाल।
मिले पिच्छिका भव्य हो, जीवन हो खुशहाल॥ 5॥

गुरु चौकी पावन बने, गुरु का हो स्पर्श।
भविजन के उपयोग में, सदा बढ़ावे हर्ष॥ 6॥

पावन होती वह धरा, जहँ गुरु-पद रज होय।
पाप कटें व पुण्य से, गम सारा तब खोय॥ 7॥

गुरु चरण की हो शरण, अनुभव मिलता रोज।
बढ़े साधना, त्याग तप-का बढ़ता है ओज॥ 8॥

गुरु ज्ञान के हेतु शुभ, नित्य पढ़ाते ग्रन्थ।
ज्ञान ढले चारित्र में, शीघ्र बनें निर्ग्रन्थ॥ 9॥

शिक्षा से बढ़ कर रही, जिन दीक्षा पहचान।
गुरु सन्निधि की दीक्षा, मोक्ष दिलाता जान॥ 10॥

जिस गृह में पावन चरण, गुरु के पड़ते जान।
'आर्जव', मार्दव आदि गुण, बढ़ें सुखद कल्याण॥ 8॥

चैत्र कृष्णा तृतीया
6 मार्च 2026 सिद्धक्षेत्र तारंगा जी

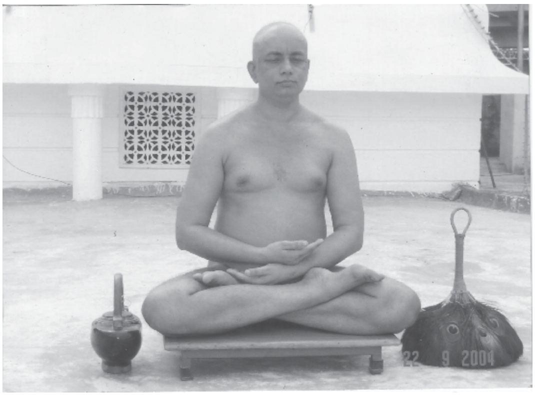

आचार्य आर्जवसागर रचित सम्यक् ध्यान शतक में ध्यान के भेद-प्रभेद एवं धारणाएँ

-डॉ. सत्येन्द्र कुमार जैन
शिक्षाविद और भूवैज्ञानिक

गुरुदेव आचार्य श्री आर्जवसागर जी महाराज द्वारा रचित बहुमूल्य कृति ''सम्यक् ध्यान शतक'' में लेखक द्वारा ध्यान से संबंधित विषय पर व्यक्त किए गए विचार पठनीय और सराहनीय हैं।

-संपादक

सम्यक् ध्यान शतक आचार्य श्री आर्जवसागर जी महाराज द्वारा रचित एक सौ तेरह दोहा छंद में निबद्ध रचना है। यह रचना एक सौ तेरह भाव की अभिव्यक्ति है। ध्यान के द्वारा आत्मतत्त्व की सिद्धि होती है। आत्मसाधक निर्ग्रन्थ कवि आचार्य श्री आर्जवसागर जी ने वैराग्य, तप, त्याग के उपरांत ज्ञान एवं ध्यान की स्थिति/अभ्यास, अनुभूति एवं परिणाम को अनुस्यूत किया है। चंचल मन को ध्यान द्वारा केन्द्रित कर परमात्म तत्त्व की उपलब्धि की सिद्धि का संदेश दिया जाता है।

मन पूरे जग में फिरे, एक-जगह ना ध्यान।
केन्द्रित निज में ध्यान तब, प्रगटे केवलज्ञान॥[1]

ध्यान आत्मिक रसानुभूति की प्रक्रिया है। मुक्ति का मूल कारण आत्मध्यान ही है। ध्यान की अवस्था में बर्हिजल्प एवं अंतर्जल्प छूट जाता है, यही साधक की सर्वोत्कृष्ट अवस्था है। ध्यानावस्था मुक्ति मार्ग की धर्म परिणत अवस्था है।

आचार्य श्री आर्जवसागर जी महाराज ने कर्मबंधनों से मुक्ति के लिए सम्यक् ध्यान का रास्ता बताया है। पर पदार्थ से दृष्टि हटाकर एक आत्म पदार्थ में दृष्टि की स्थिरता सम्यक् ध्यान है। समता, गुप्ति, शुद्धोपयोग, ध्यान, समाधि, निजानुभव, निश्चय और यथाख्यात में सम्यक् ध्यान की वृद्धि रूप अवस्थाओं का उल्लेख किया है। साधक के लिए सुयोग्य द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के मिलने पर ही ध्यान की सिद्धि होती है। ध्यान के मुख्य 4 भेद में से आर्त्तध्यान एवं रौद्रध्यान हेय कहे गए हैं। दृष्टव्य है-

अर्त्तिभाव ही आर्त्त है, जिसका दुःख है नाम।
अशुभ-बंध हो दुर्गति, बिगड़ें धर्म सुकाम॥[2]
रुद्र-भाव ही रौद्र है, क्रूर उठें परिणाम।
जिसको भी तजना कहूँ, तभी होय शुभ-ध्यान॥[3]

क्रमशः आर्त्त ध्यान के 4 भेद- इष्ट वियोग, अनिष्ट संयोग, पीड़ा चिंतवन, निदान तथा रौद्रध्यान के 4 भेद- हिंसानंद, मृषानंद, चौर्यानंद, परिग्रहानंद बताते हुए इन ध्यानों को छोड़कर धर्म ध्यान द्वारा आत्म उद्धार करने का उपदेश दिया है।

आर्त्त, रौद्र को त्याग कर, करें धर्म-मय ध्यान।
राग-द्वेष वा पाप बिन, सामायिक पहचान॥[4]
आज्ञा-विचय, अपाय भी, अरु विपाक, संस्थान।
चार धर्म ये ध्यान हैं, जग में शुभ हैं ध्यान॥[5]

धर्म ध्यान भी 4 भेद रूप है- आज्ञा विचय, अपाय विचय, विपाक विचय और संस्थान विचय। सम्यक् ध्यान शतक में धर्म ध्यान के भेद एवं प्रभेदों का भी परिचय दिया गया है संस्थान विचय धर्म ध्यान के भेद रूप 4 ध्यान पदस्थ, पिंडस्थ, रूपस्थ और रूपातीत ध्यान को शुक्ल ध्यान का साधन रूप बताया गया है। धर्म ध्यान के अंतर्गत एकाग्र स्वरूप की साधना के लिए मंत्र वाक्यों- णमोकार मंत्र, ओम् (ॐ), हँ, अर्हं, ह्रां, ह्रीं, ह्रूं, ह्रौं, ह्रः के जाप को साधन कहा गया है।

मंत्र वाक्य का ध्यान हो, वीतराग शुभ रूप।
पदस्थ जानो ध्यान वह, हो एकाग्र स्वरूप॥[6]

धर्मध्यान एवं शुक्लध्यान की प्राप्ति के लिए महत्वपूर्ण घटक है। शुक्लध्यान के 4 भेद- पृथक्त्व वितर्क वीचार, एकत्ववितर्कवीचार, सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती, व्युपरतक्रिया निवृत्ति का भी स्वरूप समाहित किया है। इन चारों ध्यानों के स्वामी का गुणस्थान अनुसार विस्तार से परिचित कराया गया है। शुक्लध्यान ही केवलज्ञान प्राप्ति एवं मुक्ति का कारण है। यह प्रशस्त ध्यान संसार की परम्परा से एवं कर्म बंधनों से छुटकारा दिलाने में श्रेष्ठ ध्यान है।

सागर वह अध्यात्म का, जिनके अंदर पूर।
रचित शुद्ध निज-आत्म में भव-वांछा से दूर॥[7]

सम्यक् ध्यान शतक में ध्यान करने वाले के लिए पृथ्वी धारणा, अग्नि धारणा, वायु धारणा, जल धारणा और तत्त्व धारणा इन पंच धारणाओं के विधिवत् अभ्यास का संकेत किया गया है। ये पंच धारणाएँ सम्यक् ध्यान के लिए सुयोग्य कही गई हैं और इनका विधिवत् अभ्यासी सम्यक् ध्यानी होता है। यही साधक ध्यान द्वारा अपना चरम-परम लक्ष्य परमात्मतत्त्व की सिद्धि करता है।

पंच तरह की धारणा, करता ध्यानी होय।
पृथ्वी, अग्नि, वायु, जल और तत्त्व संजोय॥[8]

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि 'सम्यक् ध्यान शतक' आचार्य श्री आर्जवसागर जी महाराज द्वारा रचित श्रेष्ठ ध्यान कृति है। भावपक्ष एवं कलापक्ष का सुन्दर समन्वय है। हिन्दी भाषा में रचित 'सम्यक् ध्यान शतक' ध्यान-साधकों के लिए अनुपम उपहार है। इस कृति में ध्यान की प्रारंभिक अवस्था साधक की मनःस्थिति, आसन, सुद्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, ध्यान के भेद-प्रभेद पंच धारणा, ध्यान के स्वामी, ध्यान की विस्तृत प्रक्रिया, उत्तम ध्यान का फल एवं ध्यान सिद्धि द्वारा चरम-परम लक्ष्य परमात्म तत्त्व की प्राप्ति को सुन्दर भावों एवं शब्दों में गुम्फित किया है। सुधी पाठकों के लिए आचार्यश्री आर्जवसागर जी की यह सम्यक् ध्यान

कृति मील का पत्थर है। एक सौ तेरह छंदों से एक सो तेरा की यात्रा है। शुभभावों का अभ्यास एवं चित्तवृत्ति की एकाग्रता का शुभ साधन है।

''विद्या विला'' 18, नेमिनगर कॉलोनी, जैन मंदिर के पास,
दमोह 470661 (म.प्र.) 9407287487

संदर्भ ग्रंथ

1. सम्यक् ध्यान शतक; आचार्य श्री आर्जवसागर; प्रकाशन- भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, पृष्ठ 6; गाथा 15
2. वही; पृष्ठ-16; गाथा-46
3. वही; पृष्ठ-18; गाथा-52
4. वही; पृष्ठ-20; गाथा-58
5. वही; पृष्ठ-20; गाथा-60
6. वही; पृष्ठ-23; गाथा-66
7. वही; पृष्ठ-36; गाथा-102
8. वही; पृष्ठ-27; गाथा-79

★

सिद्धाष्टक

-आचार्य श्री आर्जवसागर जी

1. अष्ट-गुणों से युक्त जो, बने सिद्ध हैं नाथ।
अष्ट-कर्म से हैं रहित, झुकते, नमते माथ॥

2. मोह-कर्म को नाशकर, पाया समकित पूर्ण।
ज्ञानावरणी को हटा, केवलज्ञान सुपूर्ण॥

3. दर्शनावरणी कर विलय, केवलज्ञान सु पाय।
अन्तराय का नाश कर, अनंतवीर्य उपजाय॥

4. नामकर्म के नाश से, सूक्ष्म गुणी भगवान।
आयु-कर्म का क्षय हुआ, अवगाहन पहचान॥

5. गोत्र-कर्म को काटकर, अगुरुलघु गुण जान।
वेदनीय को नष्ट कर, अव्यावधी मान॥

6. तप से नय से सिद्ध हो, संयम चारित्र सिद्ध।
दर्शन-ज्ञान विशुद्ध हो, हो सर्वज्ञ प्रसिद्ध॥

7 ऊर्ध्व-लोक में वास हो, सिद्ध शिला है थान।
वातवलय है अन्त में, न अलोक प्रस्थान॥

8. धर्म द्रव्य जो हेतु था, आप गमन के साथ।
'आर्जव' गति से आपने, पाया है परमार्थ॥

3 मार्च 2026 तारंगा जी सिद्धक्षेत्र

आचार्य श्री आर्जवसागर जी के साहित्य में आध्यात्मिक चिंतन

डॉ. सरिता जैन दोशी, इंदौर

परम पूज्यनीय आचार्य श्री आर्जवसागर जी महाराज द्वारा मोक्षमार्गीय उपयोगी रचित कृतियों में जैन धर्म के चारों अनुयोगों का सार, समाहित हैं। लेखक द्वारा इन कृतियों में आध्यात्मिक चिंतन का सांगोपांग, संक्षिप्त में सराहनीय विवेचन किया है।

–संपादक

प्रस्तावना– श्रमण संस्कृति के उन्नायक, विश्ववन्दनीय, भारतीय संस्कृति की शोभा बढ़ाने वाले, विशाल श्रमण संघ की बगिया के महानायक, समाधि सम्राट परम पूज्य 108 आचार्य गुरुवर विद्यासागर जी महामुनिराज इस धरा पर एक उत्कृष्ट साधक रहे हैं। आपके द्वारा दीक्षित परम प्रभावक शिष्य, ज्ञान-ध्यान-तप-साधना में निरत परम पूज्य 108 आचार्य श्री आर्जवसागर जी महाराज एक आध्यात्मिक संत हैं। आप प्रशान्तमूर्ति, करुणा सागर, वीतराग पथिक, उपसर्गजयी, समता परिणामी, उत्तरोत्तर साधनारत, परम प्रभावक एवं श्रमण संस्कृति के आदर्श श्रमण हैं। अध्यात्म का उत्कर्ष आपके व्यक्तित्व में परिलक्षित होता है। आपका व्यक्तित्व बहुआयामी है, सरलता, सहजता, संतोष, वात्सल्य आदि अनेक गुण आपके चुंबकीय व्यक्तित्व के साधन हैं।

बीज बिंदु– आध्यात्मिक चिंतन, वीतरागता, अनेकांतवाद, आत्मतत्त्व, अनुप्रेक्षा।

आचार्य श्री आर्जवसागर जी की कृतियाँ व रचनाएँ–

आपके द्वारा रचित आध्यात्मिक प्रवचन, आर्जव कविताएँ, पर्युषण पीयूष, जैनागम-संस्कार (हिन्दी, अंग्रेजी, गुजराती भाषा में), आगम-अनुयोग (भाग 1, 2), तीर्थोदय काव्य, लोक कल्याण विधान, सदाचार सूक्ति काव्य, ॐ योग ध्यान, पद्यानुवाद मंजरी (गोम्मटेश थुदी, भक्तामर स्तोत्र, द्रव्यसंग्रह, इष्टोपदेश, समाधितन्त्र, वारसाणुवेक्खा, तत्त्वसार, प्रश्नोत्तर-रत्नमालिका), मोक्ष प्रदायक काव्य, ज्ञान वर्धन काव्य आदि रचनाएँ आपके ज्ञान की गहराई को व्यक्त करते हैं।

आप आगम ज्ञाता एवं बहुभाषा विज्ञ हैं। आपके आध्यात्मिक चिंतन ही आपके द्वारा रचित अनेक काव्यों में परिलक्षित होता है। जैसा आपके अंतस् में मोक्षमार्ग पथिक का, वीतरागता का, आत्मद्रव्य का स्फुट मुखिरित रहता है। वही आध्यात्मिक भाव आपके साहित्य में पदे-पदे दृष्टव्य है।

आध्यात्मिकता की परिभाषा–

1. आचार्य कुन्दकुन्द(समयसार)

''जो सोहं जाणई सो मोक्खस्स कारणं।''

आचार्य कुन्दकुन्द के समयसार में आध्यात्मिकता का सार है जो अपने आप को जानता है वही मोक्ष का कारण है। उनके अनुसार आत्मा का स्वरूप ज्ञान-दर्शन है। आत्मा को उसी रूप में अनुभव करना ही आध्यात्मिकता है।

2. आचार्य हेमचन्द्र (योगशास्त्र)

''समता मुनिना साध्या मोक्षोपायः सनातनः।''

समता साधक के लिए सनातन मोक्षोपाय है। समाता भाव ही जैन दृष्टि में आध्यात्मिकता है।

3. आचार्य अमृतचंद्र (आत्मख्याति / आत्मसिद्धि शास्त्र)

''**निज आत्मानुभवो धर्मः।**'' स्वानुभूत आत्मा ही धर्म है।

आध्यात्मिक चिंतन- जैन दर्शन में आध्यात्मिक चिंतन का केंद्र आत्मा की शुद्धि और मोक्ष की प्राप्ति है। यह कर्म-बंधन से मुक्ति के मार्ग पर केन्द्रित है, जिसमें अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह जैसे पंच महाव्रतों का पालन, ध्यान, तपस्या और 12 अनुप्रेक्षाओं (आत्म-चिंतन के प्रकार) का अभ्यास शामिल है। जैन दर्शन सर्वज्ञता को प्राप्त करने पर बल देता है, जहाँ आत्मा सभी कर्मों से मुक्त होकर अपने अनन्त गुणों में लीन हो जाती है और परम सुख का अनुभव करती है।

- अध्यात्म को एक अमृत तुल्य माना गया है। आत्मा के मंथन से ही अध्यात्म की प्राप्ति की जाती है।
- अध्यात्म रूपी अमृत का पान करने से आत्मा में जो अशुद्धता है वह निकल जाती है।
- बाहरी अनुष्ठान से ऊपर उठकर आत्मानुभव में स्थित होना ही वास्तविक आध्यात्मिकता है।

आचार्य श्री साहित्य में आध्यात्मिक चिंतन- आचार्य श्री आर्जवसागर जी लगभग दो दर्जन ग्रन्थों की साहित्य सृजना कर चुके हैं, इन साहित्यों में आचार्य श्री ने बहुत सारे आध्यात्मिक चिंतन को समाहित किया है। यथा- आत्मा का स्वरूप, कर्म बंधन का सिद्धांत, सम्यक दर्शन, ज्ञान और चारित्र (रत्नत्रय), अहिंसा परमो धर्म, अनित्यता और अनित्य भाव का चिंतन, सप्तभंगी न्याय और अनेकांतवाद, तप और संयम, ध्यान (सम्यक् ध्यान), मुक्ति (मोक्ष) त्याग और वैराग्य आदि। सम्पूर्ण साहित्य में से सम्पूर्ण आध्यात्मिक चिन्तन का विषय प्रस्तुत करना बड़ा दुष्कर कार्य है। अतः लेख में प्रमुख साहित्य में से मुख्य चिंतन का विस्तार वर्णित है।

1. तीर्थोदय काव्य- आचार्य श्री आर्जवसागर विरचित तीर्थोदय काव्य एक अनुपम कृति है। इसके स्वाध्याय से हम सोलहकारण भावनाओं का विशुद्ध चिंतन करते हुए तीर्थंकर प्रकृति का बंध कर सकते हैं। यह काव्य चैतन्य की अनुभूति के क्षण का अनुभव कराता है। यह एक लघु पद्य ग्रंथ और उत्कृष्ट काव्य रचना है। यह काव्य श्रमणाचार, श्रावकाचार एवं अध्यात्म ग्रंथों का संक्षिप्त सार ग्रन्थ है। इसमें मूलाचार, षोडशकारण भावना, पंच महाव्रत, सम्यग्दर्शन एवं गुणस्थान आदि अनेक आध्यात्मिक विषयों पर गहराई से चिंतन किया गया है। यह आगम ग्रंथ के समान चारों अनुयोगों का सार ग्रंथ है। संयम के मार्ग का प्रकाशस्तंभी काव्य है।

तीर्थंकर प्रकृति का बंध कब होता है? इन पंक्तियों में बहुत सुंदर भाव बताया है।

भाग्यवान वह सद्दर्शी जो, उसे केवली जहाँ मिलें।
नहीं मिलें तो द्वादशाङ्ग के, श्रुत सु-केवली वहाँ मिलें॥
इन दोनों के सद्भावों में, निर्मल सम्यग्दर्शन हो।
इसी योग से उत्तम प्रकृति-तीर्थंकर का बंधन हो॥ 16/6॥

भावार्थ- इन पंक्तियों में यह आध्यात्मिक चिंतन निहित है कि संसार में सबसे बड़ा सौभाग्य उसी साधक को प्राप्त होता है जिसे प्रत्यक्ष केवली भगवान का दर्शन या उनके वचनरूपी श्रुत-केवली आचार्यों का उपदेश सुनने का अवसर मिले, क्योंकि ऐसे दिव्य पुरुषों के सान्निध्य से आत्मा में निर्मल सम्यग्दर्शन उत्पन्न होता है। यही सम्यग्दर्शन आत्मा को अज्ञान, मोह और संशय से मुक्त कर शुद्धता की ओर ले जाता है तथा उत्तम पुण्यबंध का कारण बनकर साधक को भविष्य में तीर्थंकर पद जैसी सर्वोच्च आध्यात्मिक अवस्था की ओर अग्रसर करता है। गुरु और शास्त्र के प्रति गहन श्रद्धा ही आत्मकल्याण और मोक्षमार्ग की वास्तविक कुंजी है।

- आचार्य आत्मा की स्व-परख और आत्म-जिज्ञासा को केन्द्र में रखते हुए कहते हैं-

मेरा परिचय कैसा है यह, चिंतन करते हैं सुधिजन।
मैं हूँ कौन? व किन गुणवाला? किस गति से आया भविजन?
किस को पाना? कैसे पाना? लक्ष्य हमारा क्या सज्जन?
अगर भूलते इन सबको जो, भटकें भव-वन में जग-जन॥141/34॥

भावार्थ- यहाँ आत्मा को उसके स्वरूप, गुण और अंतिम साध्य की पहचान कराने का आह्वान है। यदि मनुष्य इन प्रश्नों पर चिंतन नहीं करता और जीवन का उद्देश्य भूल जाता है, तो वह भव वन (संसार रूपी वन) में भटकता रहता है और जन्म-मरण के चक्र में उलझा रहता है। अतः इन पंक्तियों का आध्यात्मिक संदेश यही है कि साधक को आत्मज्ञान, आत्मस्वरूप की पहचान और मोक्षमार्ग की ओर ध्यान केंद्रित करना चाहिए, तभी जीवन सफल होगा।

- अहिंसा और क्षमा भाव सम्यग्दृष्टि के गुण होते हैं।

क्रोधादिक में क्षमा-भाव हो, वहाँ प्रशम-गुण माना है।
भव-बंधन से भय का होना, संवेगी बन जाना है॥
दुखी जीव में दया-भाव हो, अनुकंपा कहलाती है।
जिन-वचनों में दृढ़ता होवे, आस्तिकता आ जाती है॥186/43॥

आचार्य श्री के काव्य में आध्यात्मिक चिंतन की गहनता और तीर्थंकर की महिमा का सार दृष्टव्य है। षोडशकारण की भूमिका एवं दर्शनविशुद्धि आदि षोडशकारण भावनाओं का विस्तार से काव्यात्मक रूप से विशद विवेचन करना वास्तव में गागर में सागर भरने की उक्ति को चरितार्थ करता है। इस काव्य का मूल संदेश आत्मा की शुद्धि है।

- आत्मा का शुद्ध स्वरूप ही चित्त की निर्मलता एवं बोध का प्रकाश है।

2. आगम अनुयोग- आध्यात्मिकता मनुष्य जीवन का ऐसा आयाम है, जो उसे केवल भौतिक उपलब्धियों तक सीमित न रखकर आत्मा के उच्चतर स्वरूप की ओर प्रेरित करता है। जैन दर्शन में आध्यात्मिक चिंतन का आधार आत्मा की शुद्धि, कर्मनिर्जरा तथा मोक्षगामी मार्ग है। जिनमें आगम अनुयोग एक ऐसी अनूठी अद्वितीय कृति है, जिनमें जैनधर्म के चारों अनुयोगों के ग्रंथों का सार समाहित है। प्रश्नोत्तरी रूप में अत्यंत सरल शब्दों में लिखित

यह अद्‌भुत कृति है इस के प्रथम भाग में 1275 प्रश्नोत्तरों के माध्यम से प्रथमानुयोग एवं करणानुयोग का विशेष वर्णन है।

प्र.101- निर्मल सम्यग्दृष्टि जीव किस तरह की लोककल्याण या विश्व कल्याण की प्रबल भावना से तीर्थंकर प्रकृति का बंध करता है?

उत्तर- तीर्थंकर जिनेन्द्र देव की दिव्य-वाणी के प्रसाद से देव, मनुष्य और पशु इन सभी जीवों को धर्म का अपूर्व लाभ होता है। यह देखकर किसी महाभाग के हृदय में ऐसे अत्यन्त पवित्र भाव उत्पन्न होते हैं कि हे प्रभो! आपके समान क्षमता, शक्ति तथा सामर्थ्य मेरी आत्मा में भी उत्पन्न हो, जिससे मैं भी सम्पूर्ण जीवों को आत्म-ज्ञान का अमृत पिलाकर उनको सच्चे सुख का मार्ग बता सकूँ। इस प्रकार की विश्व कल्याण की प्रबल भावना के द्वारा सम्यग्दृष्टि जीव तीर्थंकर प्रकृति का बंध करता है।

इस प्रश्नोत्तर में निहित कृति में आध्यात्मिक चिंतन यह है कि जब सम्यग्दृष्टि जीव निर्मल भावों से लोककल्याण की कामना करता है, तब उसका हृदय व्यक्तिगत सुख या लाभ तक सीमित नहीं रहता, बल्कि सम्पूर्ण जीवों के उत्थान और मोक्षमार्ग की ओर उन्मुख होता है। तीर्थंकर प्रकृति का बंध उसी समय होता है जब जीव अपने अहंकार और स्वार्थ से ऊपर उठकर सर्वकल्याण की भावना से युक्त होकर यह संकल्प करता है कि मेरी आत्मा भी ऐसी दिव्यता प्राप्त करे जिससे मैं अन्य जीवों को आत्मज्ञान का अमृत पिलाकर उन्हें शाश्वत सुख का मार्ग दिखा सकूँ। इस प्रकार इसमें त्याग, करुणा और अनन्त जीवों की मुक्ति की भावना का श्रेष्ठ आध्यात्मिक चिंतन प्रकट होता है।

तीर्थोदय काव्य में आचार्य श्री आर्जवसागर जी लिखते हैं कि-

कैसे निकलें भव-सागर से, दुखित हो रहे ये प्राणी।
दुःख छूटे व मोक्ष शीघ्र हो, ऐसा सोचे जो ज्ञानी॥
वही जगत् को सुखी चाहने-वाला जनउपकारी है।
उसे मिले वह तीर्थंकर पद, समवसरण-अधिकारी है॥ 13/6॥

प्र.178- वैराग्य से सम्पन्न तीर्थंकर प्रभु ने सर्वप्रथम क्या दृढ़ निश्चय किया?

उत्तर- परम वैराग्य से सम्पन्न तीर्थंकर प्रभु भेदविज्ञान भास्कर के उदित प्रकाश में इस शरीर से भिन्न चैतन्य ज्योति देखकर उसे विशुद्ध बनाने के पवित्र विचारों में निमग्न हुए और आत्म प्रकाश से सुशोभित प्रभु ने अपनी मंगलवाणी से सर्व जनों को संतुष्ट कर स्वतः अन्तः -बाह्य नग्न मुद्रा धारण करने का दृढ़ निश्चय किया।

अध्यात्मिक चिंतन- तीर्थंकर प्रभु ने आत्मा और शरीर का भेद जानकर चैतन्य ज्योति में स्थिर होने का निश्चय किया। वैराग्य से प्रेरित होकर उन्होंने त्याग और नग्न मुद्रा धारण कर आत्मशुद्धि तथा मोक्षमार्ग को अपनाया, जिससे लोक में यह संदेश दिया कि सच्चा कल्याण केवल आत्मज्ञान और वैराग्य से ही संभव है।

अध्याय 10 में जीव समास, मार्गणादि और अध्याय 11 में ज्ञान एवं सम्यक्त्वादि विषय की विशद चर्चा की गई। जिनके अध्ययन से आध्यात्मिक ज्ञान का विकास कर सकते हैं।

आगम-अनुयोग भाग 2 में द्रव्यानुयोग से संपूर्ण विषय को विस्तार से वर्णित किया गया है। बन्ध त्रिभङ्गी और बन्ध, उदय, सत्व आदि का वर्णन सरलता से प्रश्नोत्तर शैली के माध्यम से किया गया है। अंत में ध्यान का बहुत सुंदर वर्णन किया है।

विषयों से हटकर आत्मा पर एकाग्र ध्यान ही कर्मों का दाहक और मोक्ष का साधन है॥ 11॥

अध्यात्मिक चिंतन यह है कि जैसे बिखरी हुई सूर्य किरणें कागज को नहीं जला पातीं, वैसे ही इन्द्रिय-विषय में भटका हुआ ध्यान कर्मों का नाश नहीं कर पाता। परंतु जब वही किरणें लेंस से एकाग्र होकर कागज को जला देती है, उसी प्रकार जब साधक अपने चित्त को संसार से हटाकर आत्मा पर एकाग्र करता है तो ध्यान की शक्ति से कर्म नष्ट हो जाते हैं और आत्मा केवलज्ञान व मोक्ष को प्राप्त करती है।

इस प्रकार आगम अनुयोग अद्वितीय कृति है, आगम के सम्यग्ज्ञान में वर्धिनी होकर कल्याणकारी मोक्ष रूपी लक्ष्मी को प्राप्त करने में सहायक है।

3. सम्यक् ध्यान शतक- जैनागम में आत्म कल्याण को परम साधना माना गया है। ध्यान की शुद्धि और महत्व को सरल, प्रेरक और काव्यात्मक रूप में सम्यक् ध्यान शतक में प्रस्तुत किया है। यह कृति ध्यान साधना के आदर्श मार्ग कर दिग्दर्शन कराती है और साधक को आंतरिक शांति, आत्म विशुद्धि तथा मोक्षमार्ग की ओर अग्रसर करती है।

मंगलाचरण में गहन आध्यात्मिक चिंतन प्रस्तुत है-

सिद्ध देव जिन श्रेष्ठ हैं, परमेष्ठी-पद रूप।
नमता सम्यक् ध्यान में, बनूँ आप्त-अनुरूप॥ 1/1॥

आध्यात्मिक चिंतन सिद्ध देव आत्मा की उस परम अवस्था का प्रतीक है जहाँ कर्म का पूर्ण क्षय हो चुका है। वे निर्वाण प्राप्त कर अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत सुख और अनंत शक्ति से संपन्न होते हैं। ध्यान करते हुए आत्मा को परमात्मा की अवस्था के अनुरूप व आप्त अनुरूप बनाने का भाव ही वास्तविक साधना है।

आतम-हित शिव-सौख्य है, आकुलता से दूर।
रत्नत्रय से प्राप्त हो, आत्म-गुणों से पूर॥ 8/4॥

आत्मा का हित वास्तविक सुख बाह्य पदार्थों विषयों या भौतिक साधनों से नहीं बल्कि आत्मा के स्वरूप को पहचानने और स्थिर रहने से प्राप्त होता है। आत्मा आकुलता का अंत करती है। तभी सहज शांति की प्राप्ति होती है। आत्म-हित से ही रत्नत्रय संभव है। आत्मगुणों की पूर्णता से आत्मा परम शांति और मोक्ष की स्थिति को प्राप्त करता है।

सागर वह अध्यात्म का, जिनके अन्दर पूर।
रचित शुद्ध-निज-आत्म में, भव-वांछा से दूर॥ 102/36॥

इन पंक्तियों में आध्यात्मिक भाव यह है कि जिनके भीतर आत्मज्ञान और अध्यात्म का सागर भरा है, वे शुद्ध आत्मा में स्थित रहते हैं और संसार की इच्छाओं व वासनाओं से दूर होकर आत्मशांति का अनुभव करते हैं।

आत्मा स्वयं में एक असीम सागर है। आत्म चिंतन और आत्मानुभूति में रमण करने वाला व्यक्ति ही वास्तविक आध्यात्मिक मार्ग पर अग्रसर होता है।

इस प्रकार सम्यक् ध्यान शतक काव्य के संपूर्ण 113 पद्य ही पूर्ण आध्यात्मिक भावनाओं से परिपूर्ण हैं। अंत में ध्यान हेतु पाँच व्रतों की पच्चीस भावनाएँ, मैत्री प्रमोद आदि चार भावनाओं को सरल एवं सूक्ष्मता से समझाया गया है।

4. पद्यानुवाद मञ्जरी- इस युग के महान अध्यात्म सूर्य महान चिंतक आचार्य कुन्दकुन्द द्वारा रचित ग्रन्थ ''वारसाणुवेक्खा'' और साहित्यसृष्टा आचार्य पूज्यपाद द्वारा रचित लघु एवं महत्वपूर्ण ग्रंथ इष्टोपदेश, समाधितंत्र अध्यात्म सागर से परिपूर्ण ग्रंथ हैं। आध्यात्मिक, गूढ़, दार्शनिक, सैद्धांतिक विशिष्ट परिभाषाओं से युक्त पद्यावली को हिंदी पद्य में ही अभिव्यक्ति करना बहुत कठिन कार्य है। अध्यात्म योगी आचार्य आर्जवसागर जी की साधना एवं उत्कृष्ट तप से यह श्रेष्ठ कार्य संभव हो पाया है। वह कुशल साहित्यकार हैं आपके गहन आध्यात्मिक चिंतन से ही यह काव्य सरस, मधुर, सुबोध बन गया है। जब पद्यानुवाद मंजरी का रसास्वादन किया जाता है तो श्रोता का हृदय आनंद से प्रफुल्लित हो जाता है।

समाधितन्त्र के पद्यानुवाद में आचार्य श्री लिखते हैं-

शुद्धात्मा का शुद्ध स्वरूप, जिन-आगम साधन द्वारा।
निज-आत्मा में एक चित्त हो, सम्यक् निज-अनुभव द्वारा॥
सुख चाहें कैवल्य भविक जो, तथा अतीन्द्रिय जिन होना।
यथा शक्ति मैं उनको रचता-शास्त्र, भाव बस दुःख खोना॥ 51/3॥

इन पंक्तियों का आध्यात्मिक चिंतन संक्षेप में यह हैं कि आत्मा का शुद्ध स्वरूप केवल जिनागम साधना और सम्यक् अनुभव से प्रकट होता है। जो जीव कैवल्य सुख और अतीन्द्रिय स्थिति को पाना चाहते हैं, उन्हें आत्मानुभव में एकाग्र होना चाहिए। ऐसे साधक का उद्देश्य केवल शास्त्र रचना नहीं बल्कि आत्मभाव से दुःख का क्षय कर आत्म-कल्याण करना है।

तत्त्वसार में आचार्य श्री लिखते हैं-

यथा-यथा मन चंचलता वा, अक्ष विषय उपशम होते।
तथा-तथा ही आत्मा के निज, उत्तम गुण भासित होते॥
नभ में यथाहि तमः दूरकर, सूर्य प्रकाशित होता है।
वैसे निज शुद्धात्म स्वरूप ही, प्रकटित भासित होता है॥ 113/30॥

इन पंक्तियों में गहन आध्यात्मिक चिंतन व्यक्त किया गया है। जैसे विषयासक्ति और चंचलता का शमन होता है, वैसे-वैसे आत्मा के श्रेष्ठ और शुद्ध गुण स्वयं प्रकट होने लगते हैं। यह स्थिति उसी प्रकार है, जैसे आकाश में अंधकार हटते ही सूर्य का प्रकाश प्रकट हो जाता है। इसी तरह जब अंतःकरण से वासनाएँ और विषयासक्ति दूर हो जाती है, तब आत्मा का शुद्ध, शांत और दिव्य स्वरूप प्रकाशित होता है।

5. मोक्ष प्रदायक काव्य- आचार्य श्री द्वारा रचित मोक्ष प्रदायक काव्य अध्यात्म चेतना का संगम दश शतक रूपी काव्य है। यह काव्य मात्र एक कृति नहीं है अपितु जिसमें एक श्रेष्ठ संत की आत्मा का आध्यात्मिक शुद्धता, उसका स्वनियंत्रित और स्वतंत्र स्वरूप तथा संसार से विरक्ति के भाव को उद्घाटित किया गया है।

आत्मसंवित्ति की पहचान-

जैसे-जैसे जहाँ समाता, अनुभव में सु-तत्त्व महा।
वैसे-वैसे सुलभ प्राप्ति हि, ना रुचते हैं भोग वहाँ॥

चिंतन है। आचार्य गुणभद्र विरचित आत्मानुशासन ग्रंथ पर आधारित ''आत्मोद्धार शतक'' के प्रत्येक पद्य में वैराग्य की प्रधानता है, जो संसार समुद्र से तरने और आत्मविशुद्धि हेतु बहुत उपयोगी है।

दादा गुरु आचार्य ज्ञानसागर जी एवं दीक्षा गुरु आचार्य विद्यासागर जी के अध्यात्म चिंतन के मोतियों को आचार्य श्री आर्जवसागर ने लघुकाय रचना रूप में समयोदय दोहों में समेटा है। मात्र 134 दोहों में निश्चय व्यवहार के रहस्य को अनेकांत रीति से रचते हुए आचार्य श्री ने काव्य में 'समय' शब्द का उपयोग किया है। 'समय' शब्द का उपयोग- आत्मा, जीव, केवली, चेतन आदि के अर्थ में किया है।

गुरु-गुण-महिमा सूक्ति काव्य में आचार्य श्री ने सद्गुरुओं के महान गुण एवं उनके आशीष की महिमा को एक सूक्ति काव्य की अनूठी विधा में दर्शाया है।

समयसार- निश्चय नय के विषय में कहा है कि-

निश्चय से यह आत्मा, निज का कर्त्ता होय।
भोक्ता भी निज का रहे, समयसार मय होय॥30/228॥

आध्यात्मिक चिंतन- आत्मा ही अपने गुणों और कर्मों की कर्त्ता है तथा वही उनके फल की भोक्ता भी है। आत्मा का स्वभाव स्वतंत्र और स्वनियंत्रित है। जब जीव इस सत्य को समझ लेता है तो ''समयसार'' (आत्मा का वास्तविक स्वरूप) प्रकट होता है। यहीआत्मानुभूति का मार्ग है।

वीतराग समदृष्टि के, नहीं भोग में आश।
भोग रहे पर निर्जरा, समयसार निज-पास॥ 59/232॥

रागी व्यक्ति परमाणु मात्र भी विषयों में राग करता है। वह आगम का ज्ञानी हो तो भी वह आत्मानुभव से वंचित रहता है।

एक शुद्ध हि आत्मा, दर्श, अरूपी, ज्ञान।
ना परमाणु-मात्र मम, समयसार पहचान॥

आत्मा शुद्ध है, व दृष्टा है, अरूपी है और उसका स्वभाव ज्ञान है। आत्मा न तो देह है, न इन्द्रिय है, न कोई भौतिक परमाणु है। वह नश्वर पदार्थों से रहित, स्वतंत्र और शुद्ध सत्ता है।

समयसार का मर्म यही है कि जीव यदि अपने को शरीर, इन्द्रिय या पदार्थ मानने के मोह से हटकर जब आत्मा को शुद्ध चैतन्य रूप में अनुभव करे, तभी वास्तविक आत्मज्ञान होता है।

आचार्य श्री की रचित मोक्षप्रदायक काव्य आत्मानुभूति, वैराग्य और सम्यग्दर्शन का अद्वितीय संकलन है। यह काव्य केवल साहित्यिक रचना नहीं, बल्कि आत्मा की गहन साधना और तत्त्वचिंतन का जीवंत प्रमाण है। इसमें आत्मानुशासन पर आधारित श्लोकों और समयोदय दोहों के माध्यम से आत्मा का स्वरूप प्रतिभासित होता है।

आत्म द्रव्य की अनुभूति जब, जिस योगी को होती है।
चक्री सम वह भोग संपदा, फीकी पड़ती रोती है॥ 45/37॥

जिस योगी को आत्मद्रव्य का अनुभव हो जाता है, उसके लिए राजाओं जैसी अपार भोग-संपत्ति भी महत्वहीन और नीरस हो जाती है। यह चिंतन बताता है कि सच्चा सुख बाहरी वस्तुओं में नहीं, बल्कि आत्मा के शुद्ध स्वभाव की अनुभूति में है। सांसारिक वैभव क्षणिक और फीका है, जबकि आत्मानुभव ही स्थायी और सर्वोच्च आनंद का स्रोत है।

''समयसार'' के सिद्धांत पर आधारित यह काव्य स्पष्ट करता है कि आत्मा ही अपने गुणों और कर्मों की कर्त्ता-भोक्ता है। जब जीव मोह और देहाभिमान से मुक्त होकर आत्मा को शुद्ध चैतन्य रूप में अनुभव करता है, तभी उसका वास्तविक स्वरूप प्रकट होता है। यही आत्मानुभूति मोक्ष का सच्चा मार्ग है।

सन्मार्ग प्रभावना काव्य- सन्मार्ग अर्थात् वह मार्ग जिसके द्वारा भव्य जीव शुद्ध बने। इसी सत् मार्ग की प्रभावना को कहने वाला काव्य सन्मार्ग प्रभावना काव्य है। आगम के विविध विषयों को एक माला में गुम्फित करके अध्यात्म के मोती में पिरोया है। बहुत सारे नवीन विषयों को इस काव्य में समाहित किया है। बच्चों के लिए संस्कार भावना तो बहुत ही अद्भुत है।

सदा भेद-विज्ञान सु-चिन्तक, दश-धर्मों का ध्यान धरें।
सोलह-कारण बारह-भावन, समाधि-रस का पान करें॥
मूलगुणी वे, उत्तर-गुणधर, लीन होयँ निज-आतम में।
देह-हेय, निज-उपादेय फिर,-सुखी, अनन्त-परमातम में॥105/27॥

इन पंक्तियों में आध्यात्मिक चिंतन का सार यह है कि साधक को सदैव भेदविज्ञान (आत्मा और शरीर का भेद) में स्थित रहकर दस धर्मों (क्षमा, मार्दव आदि) का ध्यान करना चाहिए। उसे सोलहकारण और बारह भावनाओं का मनन करते हुए समाधि का अनुभव करना चाहिए। मूलगुणों का पालन कर और उत्तर गुणों को धारण कर आत्मा में लीन होना ही साधना का लक्ष्य है। जब साधक देह को त्याज्य और आत्मा को उपादेय मान लेता है, तब वह निज आत्मा में सुखी होकर अनन्त परमात्मा स्वरूप का अनुभव करता है।

6. पर्युषण पीयूष जैन साहित्य की परंपरा में आचार्य आर्जवसागर जी का नाम विशेष आदर के साथ लिया जाता है। उनके द्वारा रचित ग्रंथ पर्युषण पीयूष केवल एक धार्मिक ग्रंथ नहीं, बल्कि आत्मा को उसके वास्तविक स्वरूप की ओर ले जाने वाला आध्यात्मिक मार्गदर्शन है। भारतीय संस्कृति में पर्व और उत्सव आत्मजागरण और आत्मशुद्धि के अवसर माने गए हैं। जैन परंपरा का पर्युषण पर्व भी इसी दृष्टि से साधक को आत्मावलोकन और

आत्मसंयम की ओर प्रेरित करता है। आचार्य श्री ने इस ग्रंथ में स्पष्ट किया है कि पर्युषण का अर्थ है आत्मा के भीतर के विकारों का शमन करना और आत्मा को शुद्ध स्वरूप में प्रतिष्ठित करना। यहाँ यह बात प्रतिपादित होती है कि पर्युषण केवल उत्सव मनाने या उपवास करने तक सीमित नहीं है, बल्कि यह आत्मा को उसकी जड़ तक पहचानने का पर्व है। आचार्य श्री ने पर्युषण शब्द का अर्थ समझाते हुए लिखा है- परि+उषण = पर्युषण। जिसका तात्पर्य है भीतर के समस्त कषायों को तप की ज्वाला में जलाकर आत्मा को निर्मल करना। यह व्याख्या स्पष्ट करती है कि उपवास और नियम तभी सार्थक है जब वे आत्मा को शुद्ध बनाने का साधन बने। केवल भूखे रहने या औपचारिक धार्मिक आडंबर करना पर्युषण नहीं है। जब साधक अपने दोषों और दुर्बलताओं का निरीक्षण करता है और उन्हें दूर करने का प्रयास करता है, तभी उसका पर्युषण सफल कहलाता है।

पर्युषण पीयूष का सबसे प्रमुख संदेश क्षमा है। जैन धर्म में क्षमा को सर्वोच्च साधना माना गया है। आचार्य श्री ने क्षमा पर्व के प्रसंग में लिखा- क्षमा मांगना केवल औपचारिकता नहीं है, क्षमा का भाव भीतर से उद्‌भूत होना चाहिए। क्षमा से अहंकार गलता है, क्रोध शांत होता है और आत्मा हल्की हो जाती है। यह कथन स्पष्ट करता है कि क्षमा केवल किसी से कह देने का नाम नहीं, बल्कि यह भीतर की कटुता, द्वेष और प्रतिशोध को समाप्त करने का साधना है। क्षमा से आत्मा शुद्ध होती है और वह अपने वास्तविक स्वरूप में प्रतिष्ठित होती है।

समता को आचार्य श्री आर्जवसागर जी ने आध्यात्मिक जीवन का स्तंभ कहा है। उनका कथन है- सुख-दुःख, लाभ-हानि, निन्दा-स्तुति ये सब संसार के द्वंद्व हैं। इनमें जो अडिग रहता है, वही समता को प्राप्त करता है। समता ही साधना की पराकाष्ठा है। यह विचार हमें बताते हैं कि जीवन में जब तक साधक इन द्वंद्वों से प्रभावित होता रहेगा, तब तक उसका आत्मिक उत्थान नहीं हो सकता। पर्युषण का वास्तविक अभ्यास समता की साधना है, क्योंकि समता से ही आत्मा मोक्ष की ओर अग्रसर होती है।

इसी प्रकार तप का महत्व भी आचार्य श्री ने गहराई से प्रतिपादित किया है। उनके अनुसार तप केवल भूखे रहना नहीं है। वह केवल शरीर का उपवास है। यह दृष्टि साधक को बाह्य आडंबर और वास्तविक साधना के बीच का भेद समझाती है। तप का वास्तविक अर्थ है आत्मसंयम और इंद्रियों का नियंत्रण। यही संयम साधक को भीतर से शक्तिशाली बनाता है और आत्मा की शुद्धि में सहायक होता है।

आत्मनिरीक्षण को आचार्य श्री ने साधना की आधारशिला माना है। उन्होंने कहा है- अपने भीतर झांकना ही पर्युषण है। दूसरों के दोष देखना सरल है, पर अपने दोषों को पहचानकर उन्हें सुधारना ही साधना है। यह विचार साधक को आत्मावलोकन के महत्व को समझाता है। जब तक मनुष्य अपनी कमजोरियों और दोषों को नहीं पहचानता, तब तक वह आत्मिक प्रगति नहीं कर सकता। पर्युषण पर्व का मूल उद्देश्य ही आत्मनिरीक्षण है, जिससे साधक भीतर से शुद्ध होकर मोक्षमार्ग की ओर आगे बढ़ें।

पर्युषण पीयूष केवल जैन धर्मावलंबियों के लिए ही नहीं, बल्कि संपूर्ण मानवता के लिए आध्यात्मिक मार्गदर्शन है। आचार्य श्री का यह साहित्य हमें यह सिखाता है कि सच्चा धर्म वही है जो आत्मा को उसके शुद्ध स्वरूप में प्रतिष्ठित करे और जीवन को शांति, संतुलन और मुक्ति की ओर ले जाए।

निष्कर्ष-

आचार्य श्री आर्जवसागर जी का साहित्य जैन आध्यात्मिक चिंतन की अनुपम धरोहर है। उनकी रचनाओं में आत्मा की शुद्धि, सम्यग्दर्शन, रत्नत्रय अहिंसा, क्षमा, समता, वैराग्य और मोक्षमार्ग का गहन विवेचन मिलता है। तीर्थोदय काव्य में तीर्थंकर प्रकृति का बंध, आगम अनुयोग में प्रश्नोत्तर शैली से आत्मज्ञान और मोक्षोपाय, सम्यक् ध्यान शतक में ध्यान की साधना, पद्यानुवाद मंजरी में आत्मानुभूति और मोक्ष प्रदायक काव्य में वैराग्य और आत्मशुद्धि का सार प्रस्तुत है। वहीं पर्युषण पीयूष आत्मनिरीक्षण, क्षमा, समता और तप की वास्तविकता को उद्घाटित करता है।

इस समस्त साहित्य का मूल संदेश यह है कि अध्यात्म केवल बाह्य अनुष्ठान या आडंबर नहीं, बल्कि आत्मा की ओर लौटने की साधना है। आत्मनिरीक्षण, आत्मसंयम और आत्मानुभूति ही वास्तविक आध्यात्मिकता है। आचार्य श्री का साहित्य साधक को यह प्रेरणा देता है कि वह राग-द्वेष, मोह और कषायों से मुक्त होकर समता में स्थित रहे और आत्मा के शुद्ध स्वरूप का अनुभव करे। यही अनुभव जीवन को शांति, संतुलन और मोक्ष की दिशा में अग्रसर करता है।

-डॉ. सरिता जैन दोशी

संस्कृत विभाग, एकलव्य विश्वविद्यालय, दमोह (म.प्र.)

संदर्भ ग्रन्थ-

1. पर्युषण पीयूष; आचार्य आर्जवसागर; प्रकाशन- भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली
2. सम्यक् ध्यान शतक; आचार्य आर्जवसागर; प्रकाशन- भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली
3. तीर्थोदय काव्य; आचार्य आर्जवसागर; प्रकाशन- भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली
4. आगम अनुयोग; आचार्य आर्जवसागर; प्रकाशन- आर्जव तीर्थ एवं जीव संरक्षण ट्रस्ट, भोपाल
5. जैनागम संस्कार; आचार्य आर्जवसागर; प्रकाशन- आर्जव तीर्थ एवं जीव संरक्षण ट्रस्ट, भोपाल
6. मोक्ष प्रदायक काव्य; आचार्य आर्जवसागर; प्रकाशन- आर्जव तीर्थ एवं जीव संरक्षण ट्रस्ट, भोपाल
7. पद्यानुवाद मंजरी; आचार्य आर्जवसागर; प्रकाशन- आर्जव तीर्थ एवं जीव संरक्षण ट्रस्ट, भोपाल
8. ह्रँ योग ध्यान; आचार्य आर्जवसागर; प्रकाशन- आर्जव तीर्थ एवं जीव संरक्षण ट्रस्ट, भोपाल

1. बिना आत्मा की पवित्रता के अतिशय संभव नहीं।

   Without the presence of the soul, the manifestation of spiritual excellence is not possible.

•••

2. याद रखना....धर्मात्मा से कभी ग्लानि मत करना। क्योंकि धर्मात्मा के बिना धर्म नहीं होता।

   Do not look for faults in devotees, because devotion keeps religion alive.

-आर्जव वचनामृत

एक सर्वोत्तम एवं अनुपम कृति ''अंतादि शतक'' सूक्ति काव्य

-डॉ. अजित कुमार जैन,
संपादक, भाव विज्ञान पत्रिका , भोपाल

''अंत भला तो सब भला'' अर्थात् अगर शुरु से सब कुछ अच्छा किया जाए तो अंत भी अच्छा ही होगा, ऐसा संक्षिप्त अभिप्राय इस उपदेशात्मक लघु सूक्तिमय काव्य ''अंतादि शतक'' का प्रयास है।

प्रातः स्मरणीय, अध्यात्म सरोवर के राजहंस, संत शिरोमणि परम पूज्य आचार्यप्रवर श्री विद्यासागरजी से दीक्षित, सिंह वृत्ति के धारक, अभय के धारक, स्व-पर कल्याण की उच्चतम भावना के धनी, वात्सल्य मूर्ति आध्यात्मिक संत, परम पूज्यनीय आचार्यश्री आर्जवसागर महाराज के द्वारा रचित अनूठी सूक्तियों निबद्ध पद्यमय कृति **'अंतादि शतक'** को सरल, सुबोध और रोचक हिंदी भाषा में गूंथा गया है। श्रावक एवं श्रमण, सभी को इसके पठन से शीघ्र ही, भाव भाषित हो जाता है। साथ ही, इसके नित्य पाठ से अपनी आत्म-विशुद्धि नामक नवनीत उत्पन्न करने का उत्तम साधन बनाया जा सकता है। इस शतक के समान सरल, सहज, मधुर, संक्षिप्त और रोचक विषय अन्य रचित साहित्य में अभी तक देखने में नहीं आया है।

आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज चतुर्थ कालीन श्रमण-चर्या के निरंतर पालक हैं, अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग में लगे रहते हैं, अखण्ड ब्रम्हचर्य का तेज उन्हें इस धरा का सूर्य उद्घोषित करता है। वे ज्ञान के भण्डार, रस सिद्ध कवि, सरल-स्वभावी, मृदुभाषी संत हैं। अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगिता के फलस्वरूप आपकी लेखनी से अनेक अतुलनीय कृतियों की रचनाएँ हुई हैं, उनमें से एक सुकृति, **'अंतादि शतक'** है जिसे हम अंतादि सूक्ति काव्य भी कह सकते हैं। इसमें 104 पद्य हैं। सर्वप्रथम, इसमें मंगलाचरण के अंतर्गत परमेष्ठी, सम्यक् ज्ञान, समवसरण और मंगल के फलस्वरूप मंगलमय जीवन सहित हमेशा जिनवाणी की सेवा पूर्वक मोक्षमार्ग से सिद्ध बनने का लक्ष्य है-

मंगलाचरण

श्री परमेष्ठी, हैं शुभ मंगल।
नाम लेयँ सब होता मंगल।।1।।[1]

मंगल श्री सद्ज्ञान है मंगल।
समवसरण-श्री मोक्ष हो मंगल।।2।।[2]

मंगल का फल व कामना

मंगल-मय, जीवन की राह।
पूर्ण करे, शिव -मंजिल चाह ।।3।।[3]

चाह हमारी, सिद्ध बनें हम।
प्रथम, भारती-सेवक हर दम।।4।।[4]

अंतादि शतक में यह भी उल्लेख किया गया है कि जिनभक्तों की जिनेन्द्र भक्ति-पूजनादि, अटूट सुगुरु

सेवा, युग के प्रारंभ में तीर्थंकर एवं विदेह क्षेत्र में सदा जैन धर्ममय वातावरण की उपस्थिति बनी रहना, जैनों के अहिंसक सदाचरण, लोक कल्याण की सद्भावना, संतोष और न्यायप्रियता-मय विश्वविख्यात व लोकप्रियता का द्योतक है। जैनों का निस्वार्थ लेन-देन और वचनबद्धता देश-विदेश में प्रसिद्ध है। मान नहीं चाहने वाला निरभिमानी होता है परन्तु उसका स्वाभाविक सम्मान होना जग की रीति है। आत्मा को जीव प्रधान जानते हुए धर्म करने से आत्मा का कल्याण निश्चित होता है। दुःखों का छूटना, अनंत सुख-दर्शन-ज्ञान का होना ही महान मोक्ष का परिचायक है। अल्प ज्ञान पूर्वक भी चरित्र की मुख्यता से सद्गुणों की बहुलता और सम्यक् दर्शन रूपी चैतन्य हीरा से जीवन की शोभा बनती है । जब भोग बिलकुल नहीं सुहाते और केवल धर्म ही सुहाता या अच्छा लगता है तो चेतना भी धर्ममय होने लगती है।

अंतादि शतक में आचार्य श्री आर्जवसागर जी महाराज ने उद्घाटित किया है कि जैसे स्वयं किए गए कर्मों के फल स्वयं को मिलते हैं, वैसे ही, स्वयं के दुःख पापाश्रित होते हैं और सुख पुण्याश्रित होते हैं। साथ ही, शुभ पुण्य के बंध के साधनों से अशुभ पाप भी शीघ्र ही क्षय हो जाते हैं। जो भी धार्मिक बंधु दया और तपादि बढ़ाने का उपक्रम करते हैं उन्हें देव भी आदर देते हैं। जिनवर के गुणों को भजकर भव्य पुण्य लाभ लेते हुए, कर्म निर्जरा कर सुख पाता है। शुभ-कर्मों से प्रभु के समान गुणों के मंगलमय गागर में, शुभ, संतोष का उपकारी सागर जैसा पुण्यानुबंधी पुण्य फल मिलता है। रागी शुभ-अशुभ कर्मों से बंधता है किन्तु बंध रहित ध्यानी होता है। ध्यानी बाधा सहकर कर्मों को भगाते और भव के शत्रुओं को हराता है। शुद्धात्मा का ध्यानी कर्म जलाकर सिद्धालय रूप सद्गति पाता है। आलौकिक उत्तम सुख पाकर परमोत्तम गुण पाता है। जो परमोत्तम सिद्ध जिन हैं, वे अक्षय और मंगल रूप महापूज्य हैं। जिन धर्मात्मा के लक्ष्य में पावनमय जिनेन्द्र देव का ध्यान होता है उनका जीवन परम उन्नत होता है।

आचार्य श्री ने ध्यान के विषय में व्यक्त किया है कि ध्यानी, अशुभ (आर्त-रौद्र) ध्यान नहीं करता है, यदि उसे शुक्ल ध्यान ना हो तो, वह धर्म ध्यान करता है। वीतराग की श्रद्धा से, जब देव-शास्त्र-गुरु हृदय में हों, तब धर्म ध्यान की शुरूआत होती है। गुरु का आशीष मिलने पर जो चारित्र प्राप्त होता है वह जवानी में खिलता है और बुढ़ापे तक साथ देता है। जवानी में जब शक्ति होती है तो ही व्रतों का पालन होता है क्योंकि बुढ़ापे में शक्ति नहीं होती है और कहा भी है कि ''दांत हों तो चने नहीं मिलते और चने हों तो दांत नहीं मिलते'' अपितु झड़ जाते हैं। ज्ञानी, क्षमा और सरल स्वभावी होते हैं और कठोर वचन सह लेते हैं। वे ध्यानी कोमल रहकर मृदुता का पालन करते हुए मान-अपमान, छल-कपट, अनीति-अनाचार में रुचि नहीं लेते हैं। विषयों के लोभी नहीं होकर रात दिन अध्यात्म में खोये रहते हैं। वे सत्-वादी-पन ना खोकर न्यायीजनों में आत्मीयता/अपनापन रखते हैं। अपनापन रखकर जीव बचाते हुए संयम-मय जीवन अपनाते हैं।

आचार्य श्री ने तप और साधना की महिमा का उल्लेख करते हुए कहा है कि तपस्वी, तप-मय जीवन अपनाते हुए पावन उपवासादि करते हैं। साधक पावन, त्यागमयी, ज्ञान और ध्यान के नित आत्म आराधक, शुद्धातम के ध्यान में लीन रहते हुए परिषह सहन करते हैं। हमेशा विषय कषाय को छोड़ते हुए हित-मित-प्रिय वचन बोल कर अपना हित करते हैं। वे सभी का हित करके मित्र बनकर पूरे जगत् का स्नेह पाते हैं। राग के जाने

पर श्रमण कहलाता है और जगत् से पार होकर परम वीतरागी बन मोक्ष में शाश्वत सुख अनंत चतुष्टय पाकर अजर-अमर होकर, पूरे लोक में पूज्यनीय हो जाता है।

जो त्याग और संयम को अपनाता है वही मोक्ष लक्ष्य/प्रसाद को पाता है। संयम के साथ सम्यग्दर्शन आवश्यक है। यम, नियम का निरतिचार पालन ही सद् विचार या शोभनीय आचरण है। व्रत धारण का फल स्वर्ग संपदा मिलना, देवों से सेवा, विदेह क्षेत्र दर्शन, आदरणीय तीर्थ दर्शन का मिलना और आपदा-विपदा का नहीं होना है। उत्तम धार्मिक जीवन वाले पूज्य पुरुष अर्थ पुरुषार्थ में स्वार्थी नहीं होकर न्यायशीलता का पालन करते हुए व्यवहार कुशल संतति पाता है। मोक्ष पुरुषार्थ में सफलता के लिए धन, वैभव, राज्य का त्याग करता है। संसार मार्ग दुखद और मोक्ष मार्ग सुखद है। जो पुरुषार्थी भोग तजता है वह संयम और व्रत के गुणों से सजता है। भोगी और निकम्मा काल के भरोसे रहता है। पुरुषार्थ करने से कार्य तभी होता है जब अनियत मानो। जब पुरुषार्थ करने से कार्य नहीं हो तो तब नियत या भाग्य मानो और दिन-रात, आलस तजकर, कर्तव्यपरायणता के साथ पुरुषार्थ करना चाहिए। सुपात्र की भरपूर सेवा करने से सुखकर पुण्य रूपी मेवा मिलता है किन्तु इस फल में सेवक फूलता नहीं है और वीतरागी की नित्य पूजन करता है। वैरागी पांच पाप छोड़ कर विषयों का रागी नहीं होता है। पूजक निर्दोष व्रत और शील का पालन करते हुए सजगता पूर्वक चतुराहार त्याग कर अनशन करता है।

शुद्धात्मा ध्यानी सदैव कर्म जलाता है, वह भव्यात्मा सम्यग्दर्शन के साथ सद्गति पाता है। मोक्ष में वह आलौकिक उत्तम, गुण सहित सुख पाता है। परमोत्तम जिनेन्द्र सिद्ध भगवान, जो अक्षय, मंगल और पूज्यनीय हैं और जो भी उनका ध्यान करता है और अपना लक्ष्य मानकर अनको पावन मानता है वह अपना जीवन उन्नतिमय बनाता है। जिस प्रकार मिश्री जीवन में स्वाद बढ़ता है उसी प्रकार अपने जीवन में सरलता को अपनाकर वह भव्यात्मा मोक्ष लक्ष्मी को पाता है।

अंतादि शतक में आत्म विशुद्धि के विषय में बताया है कि निश्चय से स्वात्मा के अलावा सब कुछ पराया है। जो पर में भटकता है वह बहिरातम है और निज में रमता है वह अंतरात्मा है। जो घाति और अघाति कर्म को जलाते हैं वे परमात्मा कहलाते हैं। जो अपने दुर्भाव जलाते हैं वे निज में निज के भाव पा जाते हैं। निश्चय अथवा वास्तविक आत्म स्वरूप में अरस, अशब्द, अरूपी होकर निज में ही खोया रहता है और संसार में कभी भी अवतरित नहीं होता है। निश्चय से, जीव में भाव होता है। पुद्गल में भाव नहीं होता क्योंकि वह जड़ है, यही भेद जीव और पुद्गल का है।

स्याद्वाद में निज प्रमुख है तो पर को गौण करना पड़ता है। अनेकांतवाद किसी गुण-धर्म को नहीं नकारता है और अन्य पक्ष का आस्तित्व स्वीकारता है। नयों में सभी पक्षों के अंश के परिप्रेक्ष्य से एक अंश का कथन किया जाता है एवं वस्तु तत्त्व की गहराई व कल्याण का कारक है। जो एक पक्ष में हठधर्मी करता है वह एकांती या मिथ्या दृष्टि है।

गृहस्थ व्रती की पोशाक सादी होती है और नेता की पोशाक खादी होती है। जहां न्याय के साथ ही खादी या खाकी पोशाक की शोभा बढ़ती है वहीं अन्यायपूर्ण यही पोशाक बरबादी का कारण बन जाती है। दया के साथ खादी मोटा पहनावा है किन्तु दया धर्म के बिना पछतावे का कारण है। पछतावा व दंड से शिक्षा मिलती है और

जब कर्ज चुकता है तब भव सौम्य बनता है। संयमित जीवन से व्रत, चारित्र मिलते हुए भव पावनमय हो जाता है और सन्यासी होकर कषाय कृश होने से शरीर व्रतधारी बनकर विशुद्धि बढ़ाते हुए निज की शुद्धि हो जाती है।

उपर्युक्त कथनानुसार, यह सुनिश्चित होता है कि अगर शुरु से सब कुछ अच्छा किया जाए तो अंत भी अच्छा ही होगा, ऐसा संक्षिप्त अभिप्राय इस उपदेशात्मक लघु सूक्तिमय काव्य **अंतादि शतक** का उद्देश्य है। यह भी उल्लेखनीय है कि इस शतक के समान सरल, सहज, मधुर, संक्षिप्त और रहस्यमय गूढ़ अर्थ सहित वर्णित आत्म विशुद्धि विषय अन्य जन रचित साहित्य में अभी तक देखने में नहीं आया है। क्योंकि हिन्दी में इस अन्तादि शतक के हरेक पद्य के अन्त का शब्द अगले पद्य का आदि होता है अतः इसे अन्तादि कहा गया है। आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज ने अपनी दैनिक व्यस्ततम चर्या, साधना एवं तपस्या के बल पर आत्म कल्याण में सतत् सक्रिय रहते हुए समाज के सर्वांगीण कल्याण के लिए इस उपदेशात्मक कृति **अंतादि शतक** सूक्ति काव्य की रचना विद्वत् जनों की आत्म विशुद्धि हेतु नित्य पठन-पाठन के लिये उपयोगी है। वात्सल्य मूर्ति परम पूज्य आचार्य श्री आर्जवसागर महाराज ससंघ के श्री चरणों में शत्-शत् नमन, वंदन और आभार निवेदित है।

संदर्भ सूचि-

1. श्री अंतादि शतक; प्रभावना; आचार्य श्री आर्जवसागर; प्रकाशन- आर्जव तीर्थ एवं जीव संरक्षण ट्रस्ट, भोपाल
2. वही
3. वही
4. वही

3. रत्नत्रय के तेज की प्रभावना; सबसे बड़ी प्रभावना है।

The influence and the spreading of the radiance of the three Jewels (Ratnatraya) is the greatest glory.

•••

4. धर्मध्यान में निश्चिंतता, निराकुलता जरूरी है।

Peace of mind and a state of freedom from all anxieties are essential requirements in righteous meditation.

•••

5. विशुद्धि को बढ़ाना है तो सद्धर्म पर श्रद्धान करो।

If you truly wish to increase your inner purity, then place your firm faith and belief in the true religion.

6. भाग्य को जगाना है तो धर्म और मोक्ष का पुरुषार्थ करो।

If you want to shape and brighten your fortune, then put your greatest effort into the path of religion and liberation.

-आर्जव वचनामृत

आचार्य श्री आर्जवसागर जी महाराज की कविताओं में देश, समाज व जनहित की भावनाएँ।

मनोज जैन निडर, पिड़ावा (राज.)

लेखक द्वारा गुरुवर आचार्य श्री आर्जवसागर जी महाराज द्वारा रचित पद्यमय साहित्य में उल्लेखित कल्याणकारी भावनाओं पर विशद विचार प्रकट किए गए हैं।

–संपादक

आनन्दित करती सबको गुरुवर की मोहक मुस्कान,
आशीष देते हाथ उठाकर लगता प्रकट हुए भगवान।
जिनकी एक झलक पाने को आतुर बच्चे बूढ़े जवान,
धन्य है धरणी जिस पर विचरण करते ऐसे संत महान॥

संत शिरोमणि आचार्य गुरुवर श्री विद्यासागरजी महामुनिराज से दीक्षित महाकवि और अद्भुत साहित्यकार आचार्य श्री आर्जवसागर जी महाराज को पाकर जैन समाज ही नहीं अपितु सर्व समाज एवं राष्ट्र भी स्वयं को गौरवान्वित महसूस कर रहा है। आचार्य श्री रचनाओं को पढ़ व सुनकर पाठक एवं श्रोता ज्ञान, भक्ति और वैराग्य की त्रिवेणी में तो डुबकी लगाता ही है, साथ ही उसका हृदय देश, समाज व जनहित की भावनाओं एवं संस्कारों से भाव विभोर और ओत-प्रोत हो जाता है। निश्चित रूप से आचार्य श्री ने अपनी कविताओं के माध्यम से देश, समाज जनहित की भावनाओं का संदेश जन जन तक पहुँचाया है।

1. समतामूलक समाज का निर्माण– ऐसे समय में जब समाज में मानवीय मूल्यों का ह्रास तेजी से हो रहा है, आचार्य श्री अपने 'सन्मार्ग प्रभावना काव्य' में समता मूलक समाज के निर्माण का संदेश देते हुए लिखते हैं–

सब जीवों में मैत्री भाव हो, गुणियों में शुभ प्रेम रहे।
दुःखी जनों में कृपा भाव हो, दुर्जन में माध्यस्थ रहे॥
यही भावना सदा रहे मम, नहीं किसी में खेद रहे।
सुखी रहें सब जीव सदा ही, नहीं किसी में भेद रहे॥[1]

समाज में समानता एवं परस्पर सौहार्द-प्रेम की भावनाओं को व्यक्त करती हुई आचार्य श्री की ये पंक्तियाँ श्रेष्ठतम समाज के निर्माण का संदेश देती हैं।

2. लव जिहाद से सतर्क रहने का संदेश– वर्तमान समय में सम्पूर्ण भारत वर्ष में सर्व अहिंसक समाज के सम्मुख एक गंभीर समस्या समाज को चिंतित किये जा रही है जिसे लव जिहाद कहकर संबोधित किया जाता है जिसके अन्तर्गत विद्यार्थियों द्वारा अहिंसक, उदार समाज की बहन-बेटियों को बहला-फसलाकर उन्हें प्रेमजाल में फंसाकर उनसे धोखाधड़ी पूर्वक शादी करके उनका धर्म भ्रष्ट कर बाद में उनका जीवन बर्बाद कर दिया जाता है।

आचार्य श्री ने समाज में बढ़ रहे इस गंभीर खतरे के बारे में चिंतन करते हुए समाज को इसके प्रति सचेत करते हुए 'अध्यात्म गीता' में काव्य रचना करते हुए लिखा है-

जिस महिला ने गृह के बाहर, पैर पसारे हों आगे।
पर-पुरुषों के साथ बैठती, और साथ में जो भागे॥
हँसी-मजाक व भड़कीला तन, अभक्ष खाती गृह बाहर।
न जाने वह रसोई, धर्म व, ना पाती गृह जग-आदर॥[2]

इस प्रकार आचार्य श्री ने अपनी रचनाओं के माध्यम से अभिवावकों को घर की बहन बेटियों के आचार-विचार, आहार-विहार एवं व्यवहार आदि पर पूर्णतया दृष्टि रखने एवं उन्हें संस्कारवान बनाने का संदेश दिया है।

3. होटल संस्कृति से दूर रहने का आह्वान- आचार्य श्री आर्जवसागर जी महाराज एक ऐसे संत हैं जो आत्म कल्याण के साथ-साथ आमजन के कल्याण का भी विचार करते हैं। वर्तमान समय में नई-नई बीमारियाँ जन्म ले रही हैं जिससे व्यक्ति की आयु के साथ-साथ चिन्तवन शक्ति भी कम होती जा रही है। आज देश और दुनिया में ब्लड प्रेशर, डायबिटीज, कैंसर जैसी खतरनाक बीमारियों से ग्रसित लोगों की संख्या निरन्तर बड़ती जा रही है जिसका मुख्य कारण अशुद्ध खान-पान है। आचार्य श्री ने अपनी रचनाओं के माध्यम से स्वस्थ्य भारत के निर्माण के लिए देशवासियों से शुद्ध शाकाहार को जीवन में अपनाने एवं होटल संस्कृति से दूर रहने का आह्वान किया है। अध्यात्म गीता में आत्मोद्धार शतक के माध्यम से आप लिखते हैं-

बाह्य-भोज्य जो, सड़ा-गला हो, जीवों से भी भरा हुआ।
अनेकानेक व्याधि का हेतु, मन-विकृति से रहे छुआ॥
बना माँस, चर्बी, हड्डी वा, अण्डे, नख, केशों से पूर्ण।
दुर्गति-कारक पाप बढ़ेगा, कष्ट-मयी जीवन हि पूर्ण॥[3]

4. व्यसन मुक्त जीवन की शिक्षा- व्यसन युक्त जीवन जीने से व्यक्ति का जीवन तो नष्ट होता ही है, साथ ही उसके परिवार, कुल की मान-प्रतिष्ठा भी समाज में धूमिल हो जाती है। आचार्य श्री ने अपनी रचनाओं के माध्यम से लोगों को व्यसन युक्त जीवन के दुष्परिणामों से परिचित कराते हुए व्यसन-मुक्त जीवन जीने की शिक्षा देने का प्रयास किया है। आत्मोद्धार शतक में लिखते हैं-

कलंकी-कुल व व्यसनी-गृह में,-जन्में सुत दुर्भागी जो।
पूज्य-जनों की अविनय करता, दुर्गतियों का भागी वो॥
व्यसनासक्त, हठी, घुमक्कड़, कुल को दाग लगा देता।
धार्मिक-परम्परा से हटकर, परिजन को भी दगा देता॥[4]

5. आध्यात्मिक क्षेत्र के साथ-साथ लौकिक क्षेत्र में ध्यान योग की महत्ता एवं उपयोगिता को स्पष्ट किया- आध्यात्मिक क्षेत्र में ध्यान योग की महत्ता एवं उपयोगिता सर्व विदित है जिसका उल्लेख जिनागम में प्राचीन आचार्यों मनीषियों ने अपने ग्रंथों के माध्यम से किया है। वर्तमान समय में आचार्य श्री आर्जवसागर जी

महाराज ने भी 'सम्यक् ध्यान शतक' नामक अपने काव्य के माध्यम से 'ध्यान योग' की महत्ता और प्रक्रिया को साधकों के लिए बड़े ही सहज और सरल पद्यों के माध्यम से स्पष्ट किया है। साथ ही आचार्य श्री ने लौकिक क्षेत्र में भी ध्यान योग के महत्व और उपयोगिता को रोचक उदाहरणों के माध्यम से प्रतिपादित करने का अद्भुत प्रयास किया है।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि जब स्वामी विवेकानन्द को किसी पुस्तक का कोई कठिन पाठ याद नहीं होता था, तब वे उस पुस्तक को बन्द करके रख देते थे और अपनी एकाग्रता बढ़ाने के लिए वे लम्बे समय के लिए ध्यान योग अवस्था में बैठ जाते थे। इस प्रकार उनकी स्मृति इतनी तेज हो गई थी कि एक बार पढ़ने में ही पूरी पुस्तक उनको कंठस्थ हो जाती थी।

आचार्य श्री ने भी वर्तमान समय की युवा पीढ़ी, विद्यार्थियों, शोधार्थियों और वैज्ञानिकों को अपनी एकाग्रता बढ़ाकर सफलता सुनिश्चित करने के लिए ध्यान योग के अभ्यास की प्रेरणा दी है। आपने अपने काव्य 'सम्यक् ध्यान शतक' के माध्यम से लिखा है-

रवि-किरणें बिखरी तपें, कागज जला न देत।
काँच साथ दुर्बीन का, भष्मसात् कर देत॥[5]

अर्थात् सूर्य की किरणें पूरे जग में फैल कर तपती हुई भी कागज को जला नहीं सकती, लेकिन दूरबीन के काँच द्वारा सभी किरणों को केन्द्रित कर कागज पर स्थिर रखने से थोड़े समय में ही कागज को जलकर भस्म हो जाता है। इसी तरह ध्यान की किरणों से अपने अज्ञान को नष्ट किया जा सकता है।

इस प्रकार अन्य कितने सुन्दर और रोचक उदाहरणों के माध्यध्म से शिक्षा, विज्ञान, कला के साधकों को ध्यान योग के अभ्यास का सन्देश अपने काव्य के माध्यम से दिया है।

6. पर्यावरण एवं प्रकृति की सुरक्षा के लिए जागरुकता का संदेश- वर्तमान समय में मनुष्य अपने निजी स्वार्थों के लिए प्रकृति एवं पर्यावरण को दूषित एवं नष्ट करने से बाज नहीं आ रहा है, जबकि मनुष्य की यह प्रवृत्ति सम्पूर्ण मानव जगत के लिए विनाशकारी साबित हो रही। आचार्य श्री ने अपनी अनुपम कृति 'तीर्थोदय काव्य' में सम्पूर्ण मानव जाति के हित की चिंता करते हुए बताते हैं कि मानव किस प्रकार खदानों और खनिज पदार्थों की उपलब्धता के नाम जगह-जगह धरती को खोद-खोदकर उसकी स्थिरता को चुनौती देकर भूकम्प को आमंत्रित कर रहा है। व्यर्थ जल की बर्बादी, वनस्पति, पेड़, जंगल आदि को काटकर विनाश को आमंत्रित किया जा रहा है। पंजाब, हरियाणा आदि क्षेत्रों में किसानों ने धान कटाई के बाद पराली जलाने की कार्यवाही से वायु प्रदुषण का संकट खड़ा किया है। आचार्य श्री अपने तीर्थोदय काव्य में लिखते हैं-

व्यर्थ भूमि पर गड्ढा करना, पानी को है बिखराना।
आग जलाना वायु रोकना, वनस्पति को कटवाना॥
छिन्न-भिन्न भी करना उसको व्यर्थ ही चलना चलवाना।
यही रही है प्रमादचर्या, अनर्थदण्डी कहलाना॥[6]

7. उपभोक्ता हितों पर होनेवाले कुठाराघात पर लेखनी चलाई– वर्तमान समय में उपभोक्ताओं पर अनेक प्रकार से कुठाराघात किया जा रहा है। सरकारी प्रयासों के बावजूद भी देश में उपभोक्ताओं के आर्थिक हितों के साथ–साथ उनके स्वास्थ्य से भी खिलवाड़ किया जा रहा है। व्यापारियों और दुकानदारों द्वारा अधिक लाभ कमाने के लालच में खाद्यान्न की चीजों में हानिकारक पदार्थों की मिलावट की जा रही है।

आचार्य श्री आर्जवसागर महाराज ने उपभोक्ता हितों की पैरवी करते हुए अपने तीर्थोदय काव्य में अतिचार के शीर्षक में व्यापक स्तर पर चल चल रहे बाजार के भ्रष्टाचार की पोल खोली है। वे लिखते हैं–

तीन योग से चोरी को जो, प्रोत्साहित नित करता है।
चोरी का धन ले व राज्य के, नियम हि खंडित करता है॥
नाप–तौल के बाँटों में जो, कम बढ़ करता रहता है।
असली में जो नकली चीजें- मिला दोष को गहता है॥[7]

8. जातिवाद एवं जातिगत भेदभाव की खिलाफत– आचार्य श्री ने एक तरफ तो अपने तप त्याग और तपस्या के द्वारा जगत में जिनधर्म की भारी प्रभावना की है तो दूसरी तरफ अपनी रचनाओं के माध्यम से समाज के सद्भाव, सौहार्द और परस्पर सहयोग की भावना को बनाये रखने का आह्वान करते हुए जातिवाद और जातिगत भेदभाव के विरुद्ध आवाज उठाते हुए मुखरित मौन खोला है। आप अपने तीर्थोदय काव्य के माध्यम से जातिवाद, जातिगत भेदभाव की आलोचना करते हुए लिखते हैं–

मातृ–पक्ष के भूपति जन हों, उच्च जाति के धनी अगर।
नीचा देखे अन्य जाति को, मद धारे पापों का घर॥
धर्म कहे नीचे से ऊपर, सदा उठाओ लोगों को।
संकट ना वह वर्ण–लाभ हो, शिव पाओ तज भोगों को॥[8]

9.साम्प्रदायिक हिंसा, दंगे और आतंकवाद के खिलाफ आवाज– वर्तमान समय में भारत ही नहीं बल्कि विश्व का ऐसा कोई देश नहीं जो साम्प्रदायिक हिंसा, दंगे और आतंकवाद के कारण अशांत और तनावग्रस्त न हो। यह एक विश्व व्यापी समस्या है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कोई भी देश अपने नागरिकों की मूलभूत आवश्यकताओं और सुविधाओं को विकसित और उन्नत करने में उतना धन नहीं लगा पा रहा है जितना खर्च इन समस्याओ से लड़ने में खर्च कर रहा है।

मानवीय पहलुओं पर दृष्टिपात करते हुए आचार्य श्री आर्जवसागर जी महाराज ने अपनी कविताओं के माध्यम पशु–वध के साथ–साथ बढ़ती मानवीय हिंसा के खिलाफ अपनी आवाज उठाकर व्यापक स्तर पर सामाजिक, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों को इस समस्या पर ध्यान केन्द्रित करने के लिए आगाह/सावधान किया है, क्योंकि मानव ही मानव जीवन के लिए खतरा बनता जा रहा है। आचार्य श्री ने 'रक्षक से भक्षक बनता जो' कहकर देश, धर्म, समाज और राष्ट्र के भ्रष्ट स्वार्थों की रक्षा एवं पूर्ति के लिए साम्प्रदायिक हिंसा, दंगे और आतंकवाद की घटनाओं को अंजाम देकर सामाजिक फूट और वैमनस्य को बढ़ाने में लगा है–

मानव तेरे अंतरंग में करुणा का भण्डार भरा।
दानव बनकर हिंसा मत कर, यह अन्दर से सोच जरा॥
रक्षक से भक्षक बनता जो, यह मानव का काम नहीं।
धर्म कहे यह हिंसा करके, सुख का मिलता नाम नहीं॥[9]

10. सामाजिक अपराधों में वृद्धि के कारणों पर शोधपरक चिन्तन- आर्जव कविताएँ धार्मिक एवं आध्यात्मिक क्षेत्र में मार्गदर्शन करने के साथ-साथ बढ़ते सामाजिक अपराधों के कारणों एवं उनके समाधान का शोधपरक चिंतन भी व्यक्त करती है।

आचार्य श्री आर्जवसागर जी महाराज ने प्राचीन भारतीय संस्कृति में अपनाए गये ऋषि-मुनियों के द्वारा दिये गये आचार-विचार-आहार संबंधी गूढ़ सूत्रों को बड़ी सहजता-सरलता और प्रमाणपूर्वक अपनी कविताओं के माध्यम से आमजन तक पहुँचाकर निर्मल चित्त वृत्ति के निर्माण के लिए उनका मार्गदर्शन किया है। आचार्य श्री ने अपनी रचनाओं के माध्यम से यह समझाने का प्रयास किया है कि जैसा खायेगा अन्न वैसा होगा मन, जैसा होगा मन वैसा ही होगा चिंतन और जैसा हो चिंतन वैसा ही बनें जीवन''

आचार्य श्री सात्विक आहार का समर्थन करते हैं। उनके अनुसार दुष्कर्म, हत्या, अपहरण आदि बढ़ते हुए अपराधों का मुख्य कारण मनुष्य की बढ़ती तामसिक वृत्ति है जिससे मन, वचन और तन में विकृति आती है।

आचार्यश्री अपनी कविता में लिखते हैं-

मद्य मांस खा मधु सेवन में नहीं अहिंसा पलती है।
मन वच तन में विकृति आती, वृति तामसिक बनती है॥
नहीं धर्म में मन लगता है, इनका सेवन जो करता।
क्रूर भाव से धर्म भूलकर, दुर्गति पीड़ा वह सहता॥[10]

11. प्रतिभा पलायन की राष्ट्रीय समस्या पर गहरी चिंता व्यक्त की- वर्तमान समय में प्रतिभा पलायन भारतवर्ष की एक राष्ट्रीय समस्या बन चुका है। इन दिनों भारत वर्ष के लगभग हर राज्य में बड़े-बड़े शिक्षण संस्थान, विश्वविद्यालय, अनुसंधान और शोध केन्द्र स्थापित किये जा रहे हैं जहाँ उच्चतम शिक्षा एवं ज्ञान प्राप्त करके भारतीय युवा अपने कैरियर का निर्माण कर रहे हैं। लेकिन ये ही भारतीय युवक बड़े आर्थिक पैकेज के लालच में अपने देश में सेवा न देकर विदेश की और भाग रहे हैं। जिसके कारण भारतीय जनता उच्च्तम, शिक्षा, ज्ञान एवं तकनीकी सेवाओं से वंचित हो रही है। इस प्रकार जब हमारे देश की सरकारें देश के विकास के लिए करोड़ों, अरबों रुपये लगाकर बड़े-बड़े संस्थान खोलती हैं लेकिन उनमें ज्ञान प्राप्त करके जब सेवा का अवसर आता है तो यहाँ का विद्यार्थी अधिक धन के लालच में विदेशी धरती पर सेवा देने चला जाता है जिससे सरकारी प्रयासों को धक्का लग रहा है।

आचार्य श्री आर्जवसागर जी महाराज ने अपनी प्रभावना नामक कृति में जन जागरुकता के लिए

प्रतिभा पलायन की राष्ट्रीय समस्या पर गहरी चिंता व्यक्ति की है-

मेरी संतति मातृभूमि में, संस्कारों को पायेगी।
माँ की आज्ञा शिरोधार्य कर, पिता कुलीन कहलायेगी॥
उत्तम कृषि, मध्यम व्यापारी-, बने, दान में आगे हो।
नहीं नौकरी कर, नौकर हो, गाँव छोड़ न भागे वो॥[11]

12.उच्चतम शिक्षा के नाम नैतिक एवं सामाजिक दायित्वों से मुख मोड़ती भारतीय युवा पीढ़ी- आचार्य श्री आर्जवसागर जी महाराज ने अपनी रचनाओं में देश, धर्म, समाज और संस्कृति के सम्मुख जन्म ले रही नई-नई समस्याओं को रेखांकित करके आमजन को झकझोर दिया है वर्तमान समय में हम देखते हैं कि उच्च शिक्षा प्राप्त करने के नाम पर हमारे देश की युवा पीढ़ी गाँव, शहर और देश को छोड़कर विदेशों में जा रही है जिसके कारण देश की युवा पीढ़ी देश, धर्म, समाज और परिवार के प्रति अपने नैतिक एवं सामाजिक दायित्वों से विमुख होती जा रही है। गाँव, शहर और देश को छोड़कर विदेशों में पढ़ने वाले विद्यार्थियों के आचार-विचार और चारित्र में पतन देखा जा रहा है। कुसंगति के कारण बुरी आदतों और व्यसनों का शिकार हो रहे हैं। भारतीय युवा गाँव, शहर, देश, समाज और परिवारजनों से लगातार दूर रहने के कारण युवाओं में स्वजनों के प्रति स्नेह और आत्मीयता निरन्तर कम होती जा रही है और रुपया, पैसा, वासना और विलासिता पूर्ण जीवन से तनाव बढ़ता जा रहा है।

आचार्यश्री आपकी रचनाएँ ऐसे समय में और भी प्रासंगिक हो जाती हैं जब मिडिया के माध्यम से हम को ऐसी खबरें देखने और सुनने को मिल रही है कि विदेश में नौकरी करने वाले और पढ़ने वाले बेटे बेटियों के पास इतना भी समय और संवेदनाएँ नहीं हैं कि वे अपने माता-पिता के अंतिम संस्कार में भी शामिल हो सके। इंसानियत, मानवता और रिश्ता तो उस समय तार-तार हो जाता है जब अमेरिका में बैठा हुआ पुत्र अपने पिता के अंतिम संस्कार में ऑनलाइन शामिल होता है। तार-तार होती मानवीय संवेदनाओं का दृश्य प्रस्तुत करती आचार्य श्री की ये पंक्तियाँ वर्तमान समाज का आईना हमारे सम्मुख प्रस्तुत कर रही है-

बाहर जा बाहर के होते, निज घर को ही वे भूलें।
संस्कार को भी भूलें वे, व्यसनों में रत हो फूलें॥
माता-पिता गर कष्टों में हों, न परवाह उन्हें रहती।
कहें वहीं से टाटा वे तो, उनमें करुणा न पलती॥[12]

13. जन मंगल की साधना के कवि- यद्यपि आचार्य श्री आर्जवसागर जी महाराज ने निजआत्म कल्याण के लिए संयम और साधना का मार्ग चुना है तथापि अपने व्यक्तित्व एवं कृतित्व के माध्यम से आमजन की सुख, समृद्धि, शांति एवं उत्तम स्वास्थ्य, प्रगति के लिए भी मार्ग सुझाया है। आचार्य श्री द्वारा रचित सदाचार सूक्ति काव्य में सूक्तियों के माध्यम से मानव मात्र के आध्यात्मिक एवं भौतिक कल्याण के अनेक सूत्र और समाधान सहज एवं सरल रूप में प्रस्तुत किये गये।

आमजन के विकास एवं सुख समृद्धि के लिए विभिन्न देशों की सरकारें जिन पहलुओं पर विचार और कार्य कर रही हैं; उन सभी पहलुओं पर आचार्य श्री के द्वारा छोटी-छोटी काव्य सूक्तियों के द्वारा सटीक समाधान प्रस्तुत किये गये हैं। जैसे शिक्षा, ज्ञान-विज्ञान, स्वास्थ्य, साहित्य, स्वदेशी, राष्ट्रीयवाद, लोकल फॉर वोकल, आत्मनिर्भरता आदि सभी विषयों पर आचार्य श्री द्वारा काव्यमय मार्गदर्शन किया गया जिसे आत्मसात् करके आमजन अपने आध्यात्मिक कल्याण के साथ-साथ अपने भौतिक जीवन को भी सुखी-समृद्ध, शांतिमय और सफल बना सकता है।

साक्षरता एवं स्वदेश सेवा का संदेश- छोटी-सी सूक्ति में आचार्य श्री ने शिक्षा, साक्षरता और स्वदेश सेवा का संदेश देते हुए लिखा है-

शिक्षा उत्तम, ज्ञान अपार। स्वदेश सेवा जीवन सार॥[13]

पढ़ें लिखें नित नेक बनें। समय व्यर्थ न कभी करें॥[14]

स्वच्छ भारत स्वस्थ्य भारत का संदेश- स्वच्छता जागरुकता के लिए आचार्य श्री ने अपनी सूक्ति के माध्यम से स्वच्छ भारत और स्वस्थ्य भारत के अभियान को गति प्रदान की है-

सुथरा, स्वच्छ स्थल होता।
मन, पवित्र निर्मल होता॥[15]

आचार्य भगवन् के चरणों में अनंतों बार नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु

संदर्भ सूचि-

1. सन्मार्ग प्रभावना काव्य; आचार्य श्री आर्जवसागर; प्रकाशक- आर्जव तीर्थ एवं जीव संरक्षण ट्रस्ट, भोपाल
2. अध्यात्म गीता; आचार्य श्री आर्जवसागर; प्रकाशक- आर्जव तीर्थ एवं जीव संरक्षण ट्रस्ट, भोपाल
3. आत्मोद्धार शतक; अध्यात्म गीता; वही
4. वही
5. सम्यक् ध्यान शतक; आचार्य श्री आर्जवसागर; प्रकाशक- भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली
6. तीर्थोदय काव्य; आचार्य श्री आर्जवसागर; प्रकाशक- भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली
7. वही
8. वही
9. आर्जव कविताएँ; आचार्य श्री आर्जवसागर; प्रकाशक- आर्जव तीर्थ एवं जीव संरक्षण ट्रस्ट, भोपाल
10. वही
11. प्रभावना; आचार्य श्री आर्जवसागर; प्रकाशक- आर्जव तीर्थ एवं जीव संरक्षण ट्रस्ट, भोपाल
12. सन्मार्ग प्रभावना काव्य; वही

13-15. सदाचार सूक्ति काव्य; आचार्य श्री आर्जवसागर; प्रकाशक- आर्जव तीर्थ एवं जीव संरक्षण ट्रस्ट, भोपाल

आयुर्वेद का सार- सदाचार सूक्ति काव्य

-डॉ. जिज्ञासा जैन, अशोकनगर

जहाँ एक ओर पूरे विश्व में प्रचलित आधुनिक रासायनिक औषधियों का भरपूर उपयोग विभिन्न बीमारियों के उपचार हेतु किया जा रहा है जिसके गंभीर दुष्प्रभाव बहुतायत में हो रहे हैं। इन दुष्प्रभावों वाली औषधियों के स्थान पर घरेलू उपचार वाली दुष्प्रभाव रहित आयुर्वेदिक औषधियों का पद्यमय वर्णन आचार्य श्री आर्जवसागर जी महाराज द्वारा रचित 'सदाचार सूक्ति काव्य' के आहारौषध दृश्य नामक अध्याय में किया गया है। लेखक ने दैनिक जीवन में जो रोग मुक्ति का साधन है, ''सदाचार सूक्ति काव्य'' को आयुर्वेद के सार तुल्य व्यक्त किया है।

-संपादक

''**हिताहित सुखं दुःखमायुस्तस्य हिताहितम् मानं च तच्च यत्रोक्तमायुर्वेदः स उच्यते।**'' (च.सू.1)[1]

जिस ग्रन्थ में हित, अहित, सुख, दुःख इन 4 आयु का मान, आयु के लिये हित, अहित और उसका स्वरूप बतलाया जाता है उसे आयुर्वेद शास्त्र कहते हैं। आयुर्वेद अर्थात् आयु का वेद। यह हमें बतलाता है कि हमने इस धरती पर जन्म लिया है तो हम कैसे अपनी पूर्ण आयु तक जीवन व्यतीत कर सकें।

''**स्वस्थस्य स्वास्थ्य रक्षणम् आतुरस्य विकार प्रशमन् च।**'' (च.सू.-30)[2]

यह केवल रोग को ही दूर नहीं करता अपितु स्वस्थ्य पुरुष के स्वास्थ्य की भी रक्षा करता है।

आचार्य आर्जवसागर जी महाराज की हम भक्तों पर असीम कृपा और आशीर्वाद रहा है कि आचार्य श्री द्वारा रचित ''सदाचार सूक्ति काव्य'' यह अनूठे ग्रंथ की रचना हुई और हम सभी को यह पढ़ने का और अपने जीवन में इसे अपनाने का लाभ प्राप्त हो रहा है। इसी काव्य में से मैं आहार औषध दृश्य को आयुर्वेद के माध्यम से बताना चाहूँगी ''**आयुर्वेदो अमृतानाम्**'' अर्थात् आयुर्वेद को अमृत कहा गया है।

''पथ्य-अपथ्य में, सुख व खेद हो।
हित न अहित का, आयु वेद (ज्ञान) हो॥''[3]

जो आहार द्रव्य शरीर और मन के लिये हितकर हो वह पथ्य कहलाता है और जो आहार द्रव्य शरीर और मन के लिये अहितकर हो वह अपथ्य कहलाता है।

''**पथ्यं पथोऽमपेतं यद्यच्चोक्तं मनसः प्रियम्।**'' (स.सू-25)[4]

आयुर्वेद में हित, अहित सुख और दुःख इन 4 प्रकार की आयु का वर्णन प्राप्त होता है।

दिन में खाते, भजते नाथ।
रहें निरोगी, सबके साथ॥[5]

स.सू.का. में बताया गया है कि संध्या के समय भोजन, अध्ययन, शयन नहीं करना चाहिए। दिन में भोजन करना चाहिए। यह करने से जठराग्नि इस समय प्रबल रहती है जिससे भोजन का पाचन अच्छे से होता है।

आहार, निद्रा, ब्रह्मचर्य में।
सजग, स्वस्थ्य हो निजी-चर्य में।।[6]

यह आहार, निद्रा, ब्रह्मचर्य हमारे शरीर के उपस्तम्भ (स्थिर) कहे गए हैं। इन तीनों का युक्तिपूर्वक सेवन हमारे शरीर को स्थिर बनाता है।

मन्द, मध्य व तीक्ष्ण-अग्नि में।
योग्य-पाच्य हो जठराग्नि में।।

''**तैर्भवेद्विषमस्तीक्ष्णो मन्दश्चाग्निः समैः समः।**'' (अष्टांग हृदय1)

वातादि दोषों के प्रभाव से अग्नि (जठराग्नि) भी -वात दोष से विषम, -पित्त दोष से तीक्ष्ण और कफ दोष से मन्द हो जाती है।

वृद्ध, जवाँ व बाल अवस्था।
प्रकृति देख ही दवा व्यवस्था।।[8]

अर्थात् वृद्ध अवस्था में-वात प्रथम प्रकृति, बाल अवस्था में- कफ प्रथम प्रकृति, जवाँ/युवा अवस्था में-पित्त प्रधान प्रकृति देती है इसलिए इसी के अनुसार चिकित्सा अलग-अलग हो जाती है।

शाकाहारी, शुद्ध-विचार।
जीते जग में, देव-प्रकार।।[9]

''**अहिंसा प्राणिनां प्राणवर्धनानामउत्कृष्टतमं्।**''[10] (च.सू.-30)

प्राणियों के प्राण का वर्धन करने वाले गुण-धर्म में अहिंसा को सर्वश्रेष्ठ माना गया है। इसलिए अहिंसा पालनार्थ सदैव शाकाहार भोजन करना चाहिए।

गर्म-जल हो, सुपाच्य रहा है।
उबले; अमृत-वाच्य सखा है।।[11]

''**दीपनं पाचनं कण्ठयं लधुराणं बस्तिशोधनम्।**'' (च.अ.द्र-5)

उष्ण जल जठराग्नि को प्रदीप्त करता है, लघु अर्थात् सुपाच्य है, बस्ति का शोधन करता है।

बिना न उबला, भोज्य कभी हो।
फिर बीमारी, कभी नहीं हो।।[12]

उबला, ऊष्ण भोजन करने से वह शीघ्र ही पच जाता है, कफ का शोषण कर, उदर की अग्नि तीव्र करता है इसलिए उबला भोजन बीमारी को दूर करने में सहायक होता है।

मात्रा भोजन, मेहनत साथ।
स्वस्थ रहोगे, दिन व रात।।[13]

मात्रा पूर्वक आहार प्रकृति में बाधा न पहुँचाते हुए निश्चित ही बल, वर्ण, सुख और पूर्ण आयु से युक्त करता है।

वात, पित्त, कफ कुपित हो हार।

विवेक संतुलन, स्वास्थ सुधार॥[14]

''विकृताविकृता देहं धनन्ति ते वर्तयन्ति च।'' (अ.हृ.1)

वात आदि दोष विकृत अवस्था में शरीर का विनाश कर प्रमाद सम्पादन करने में सहायक होते हैं।

त्रि-फल मिलकर त्रिफला होता।

रत्नत्रय; शिव-फल को जोता॥[15]

हरड, बहेरा, आँवला इन 3 फलों के संयोग से त्रिफला बनता है जो रसायन का कार्य करता है। जैसे सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान, सम्यक् चारित्र से अर्थात् तीनों के संयोग से मोक्ष मार्ग की प्राप्ति होती है उसी प्रकार त्रिफला अर्थात् तीनों फलों के संयोग से आरोग्य की प्राप्ति होती है।

त्रिफला में एक फल हरितकी होती है जिसकी महिमा आपके सामने जितनी गाऊँ उतनी कम है। कहा जाता है-

''तस्य माता नास्ति हरितकी सस्ति॥''

जिस प्रकार माता अपने बालक का ध्यान रखती है उसी प्रकार हरितकी रोगी व्यक्तियों को स्वास्थ प्रदान करने में लाभकारी होती है।

आमद कम, खर्चा अपार।

एक अनार, सौ बीमार॥[16]

''न ह्यता पापात् पापीयोऽस्त्रि यदनुपकरणस्य दीर्घमायुः''[17] (च.सू.-11)

संसार में इससे बड़ा कोई भी पाप का फल नहीं है कि आयु बहुत बड़ी हो, पर उपभेग की कोई सामग्री न हो।

गाय-दुग्ध, घृत, शीतल होता।

निर्मल दृष्टि, तप-शक्ति संजोता॥[18]

गाय का दुग्ध मधुर रस, वीर्य में शीतल होता है।

तक्र सुपाच्य, सुशीतल होवे।

ध्यानी सरल, सुशांति में खोवे॥[19]

तक्र जठराग्नि वर्धक होता है। और ग्रहणी रोग में तक्र का विशेष महत्वपूर्ण स्थान है।

ज्वर आदिक में, मूंग है प्यारी।

धर्म साधना- में गुणकारी॥[20]

मूंग की दाल शीतवीर्य, पित्तनाशक होती है और सभी दालों में श्रेष्ठ मानी जाती है। ज्वर की प्रथम चिकित्सा लंघन बताई है इसलिए सबसे लघु आहार अर्थात् मूंग की दाल का सेवन करना चाहिए।

यथा मुनक्का, पाच्य विरेचक।

तथा साधु-वच, हितैषी रोचक॥[21]

मुनक्का प्यास, मन्दाग्नि, दूर करती है, यह विरेचक होती है और पाचनीय होती है।

अमरूद भूख व अग्नि बढ़ाये।

शीत ऋतु में शक्ति लाये॥[22]

पारावत (अमरूद) अत्यग्नि नाशक होता है। यह मधुर और असल दो प्रकार का होता है।

सौंठ सर्दी को हर लेती।

मुलेठी कण्ठ स्वच्छ कर देती॥[23]

सौंठ कफ वात का शमन करती है इसलिए सर्दी को हर लेती है। मुलेठी कण्ठ को साफ करती है।

काली मिर्च पाचक होती।

कण्ठ साफ कर ठण्डक देती॥[24]

यह कफ नाशक और विपाक में कटु मानी गई है इसलिए पाचक और कण्ठ के लिए गुणकारी होती है।

पिपली कफ हारक होती।

खांसी में राहत देती॥[25]

हरी पिप्पली कफकारक, रस में कटु होती है जिससे खाँसी में लाभ प्रदान करती है। इसी के साथ अंत में कहना चाहूँगी कि हम सभी को यह अनूठा ग्रंथ **सदाचार सूक्ति काव्य** अवश्य पढ़ना चाहिए और इसमें आचार्यश्री आर्जवसागर जी महाराज द्वारा रचित बातों को अपने जीवनशैली में अवश्य प्रयोग करना चाहिए। जिससे हम आरोग्य की प्राप्ति कर सकें और पूर्ण आयु तक अपना जीवन व्यतीत कर सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. च.सू.1

2. च.सू.30

3. सदाचार सूक्ति काव्य, आचार्य श्री आर्जवसागर जी, पृष्ठ 50 पद्य 1

4.च.सू. 25

5-9 सदाचार सूक्ति काव्य; आचार्य श्री आर्जवसागर जी, आहारौषध दृश्य, पृष्ठ 50 से 60

10. च.सू. 30

11-16 सदाचार सूक्ति काव्य, आचार्य श्री आर्जवसागर जी, आहारौषध दृश्य, पृष्ठ 50-60

17. च.सू.17

18-26 सदाचार सूक्ति काव्य, आचार्य श्री आर्जवसासगर जी, आहारौषध दृश्य

सम्यक् ध्यान शतक

-प्रीति अजमेरा, गया, बिहार

आचार्य श्री आर्जवसागर जी महाराज द्वारा रचित अद्‌भुत कृति 'सम्यक् ध्यान शतक' में लेखिका द्वारा ध्यान संबंधित विषय पर पठनीय एवं सराहनीय विचार व्यक्त किए हैं।

-संपादक

सर्वप्रथम गुरुवर के चरणों में वंदन है, नमन है। हमें यह सुअवसर प्राप्त हुआ है कि हम गुरुवर की कृति के बारे में आलेख लिखें, यह सूरज के आगे दीपक जलाने के चेष्टा करने जैसी बात है फिर भी कोशिश करती हूँ कि आलेख अच्छे से, सुस्पष्ट तरीके और व्यवस्थित ढंग से लिख सकूँ

आचार्य श्री आर्जवसागर महाराज का नाम किसी परिचय का मोहताज नहीं। भाद्र शुक्ल अष्टमी को दमोह जिले में श्री शिखरचंन्द जी एवं श्रीमती माया बाई जैन के यहाँ पारसचंद जैन नामक बालक ने जन्म लिया। 11-11-1967 का वह महत्वपूर्ण दिन था जब यह बालक इस धरती पर आया। पथरिया में बचपन बीता और 19-12-1984 में ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया। 8-11-1985, 10-07-1987 एवं 31-03-1988 में क्रमशः क्षुल्लक दीक्षा, एलक दीक्षा और मुनि दीक्षा ग्रहण की, जहाँ-जहाँ पारसचन्द जी ने दीक्षायें ग्रहण की वह नगर, अहारजी, थूबौनजी और सोनागिर जी धन्य हुये। दीक्षा गुरु विद्यासागर जी महाराज के द्वारा दीक्षित हुये और ''पारस'' सही में बेशकीमती रत्न बन गये।

आचार्य श्री सीमंधरसागर जी द्वारा आचार्य पद दिया गया और मुनिवर ''आचार्य आर्जवसागर जी महाराज'' हो गये।

आपकी प्रमुख कृतियों में जैनागम संस्कार, परमार्थ साधना, आगम अनुयोग आदि हैं। इन्हीं कृतियों में एक नाम है ''सम्यक्-ध्यान-शतक'' जिस पर आज मैं लिखने जा रही हूँ।

आचार्य श्री ने मंगलाचरण करते हुये सिद्ध भगवान की श्रेष्ठता बताई है, जो परमपद पर आसीन हैं, जिन्हें हम सभी समीचीन ध्यान से नमन करते हैं, जिससे हम सब भी सिद्ध बन सकें।

आचार्य श्री आगे बता रहे हैं कि हर जीव सांसारिक कर्मों का बंध करके संसार में भ्रमण कर रहा है। पर पदार्थों में आसक्ति है और चेतन अर्थात् आत्मा को भूल गया, निज स्वभाव को भूल कर भ्रमण कर रहा है। 'सम्यक् ध्यान' तभी प्रकट हो सकता है जब हम सांसारिक विषय भोगों को त्याग दें और चिंतायें समाप्त कर दें। इसी से मोक्ष की प्राप्ति होगी। जन्म-मरण, कर्म-बन्ध, देव, मनुष्य, नरक तथा तिर्यंच गति में भ्रमण करते रहना संसार का दूसरा नाम है।

सम्यक् दर्शन, ज्ञान और सम्यक् चारित्र इन तीनों की एकता ही मोक्ष मार्ग दिलायेगी। आठों कर्मों का नाश होने पर मोक्ष मिलता है। प्रत्येक भव्य जीव में मोक्षमार्ग पाने की योग्यता है, अभव्य जीवों में नहीं।

आचार्य श्री कहते हैं वस्तु स्वभाव, दस धर्म, दया इन सबके बिना जो है वह अधर्म कहलायेगा। ये सब मोक्षमार्ग के लिए मजबूत पायदान है अर्थात् सीढ़ियाँ हैं। कुछ निम्नलिखित पंक्तियों से दस धर्म को समझा जा सकता है-

हृदय में क्षमा हो तो घमंड नहीं होता,
सरल मन में कपट नहीं होता।
सत्य भावों के साथ होने पर,
संयम का मार्ग कठिन नहीं होता।
मन में पवित्रता एवं दृढ़ता तप करने पर,
स्वतः आ जाती है।
त्याग करने से यह मन शरीर पर आसक्त नहीं होता,
परिग्रह त्याग करना।
अकिंचन सिखाता है,
ब्रह्मचर्य पालन की महिमा का यूँ ही गुणगान नहीं होता।
यही सब दस धर्म हमारे गहने हैं,
जिनके बिना मनुष्य का शृंगार पूरा नहीं होता।

कहने का तात्पर्य यह है कि आत्मा का हित सिर्फ और सिर्फ इंद्रिय विषयों से रहित, आकुलता रहित जीवन जीने में है और यही सबसे बड़ा सुख होता है। यही सुख रत्नत्रय रूपी मोक्षमार्ग से प्राप्त होता है, समीचीन ध्यान से मिलेगा। आचार्य श्री आगे बतला रहे हैं कि-

मन हमारा बंदर के समान चंचल होता है, जिसे हमं धर्म-कार्यों में लगाना आवश्यक है। धर्म ध्यान आदि से मन की एकाग्रता बढ़ती है, स्वविवेक जगता है, पाप कर्मों से दूर हो कर कर्मों की निर्जरा होती है। हमारी इंद्रियाँ और मन मिलकर बहुत बाधा उत्पन्न करते हैं। ऐसे ही बाधाओं से बचने के लिये ज्ञानीजन, जैसे कछुआ अपनी पीठ की आड़ में पैर और मुख सुरक्षित रखता है, वैसे ही अशुभ कर्मों से बचने के लिए 'ध्यान' लगाते हैं।

जिस प्रकार विषय वासना की वायु से आत्मा का दर्शन हीं होता है, मानव मन पूरे जग में भटकता रहता है, सूर्य की किरणें पूरे जग में फैल कर भी कागज को नहीं जला पाती वैसे ही जब एकाग्रता हासिल नहीं होगी, समीचीन दृष्टि नहीं होगी हमारा 'ध्यान' भी 'समीचीन' नहीं होगा। समीचीन ध्यान की अवस्था ही सर्वोत्तम अवस्था है। केवलज्ञान तभी प्रकट हो सकता है जब ज्ञानी अपने विषय कषायों पर विजय प्राप्त करें।

ये तो हमें ज्ञात होता है कि सम्यक् ध्यान के बिना मोक्ष भी असंभव है। मगर ध्यान देने योग्य बात यह है कि ध्यान प्राप्त कैसे हो, इसके लिये क्या करना होगा, कैसे करना होगा, इसके लिये अर्थात् ध्यान में बाधक कौन है इत्यादि, इस परिपेक्ष्य में गुरुवर ने बहुत अच्छे से समझाया है। ध्यान की अवस्थाओं के बारे में बताया है जैसे-

समता, गुप्ति, शुद्धोपयोग, निजानुभव, निश्चय, यथाख्यात ध्यान समाधि ये सभी ध्यान में वृद्धि करने में सहायक हैं।

सुयोग्य द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, भव, ध्याता (ध्यान करने वाला), साध्य (जिसको साधना करनी हो) साधन, संहनन ये सभी निमित्त ध्यान वृद्धि में सहायक हैं। प्रत्येक जीव के ध्यान के लिए जीव द्रव्य आधार है।

ध्यान करने वाले ज्ञानी, ध्यानी, योगी खड्गासन, पद्मासन आदि से श्रेष्ठ अवस्था को प्राप्त होता है। आचार्य श्री ने ध्यान के लिये हर छोटी-छोटी बातों को सरलतम तरीके से समझाया है। ध्यानी के आहार में मर्यादित, शोधित, शाकाहारी, भक्ष्य पदार्थों का समन्वय होना चाहिए जो स्वास्थ के लिए और साधना के लिए श्रेयस्कर होता है।

गरिष्ठ, भोजन, स्त्री संपर्क, व्यसन आदि सम्यक् ध्यान में बाधक होते हैं। स्पर्शन और रसना इंद्रियों के ऊपर संयम रखना ध्यानी के लिये अनिवार्य है, अन्यथा समीचीन ज्ञान हासिल नहीं होगा। गुरुवर आर्जवसागर जी तो जैसे गागर में सागर जैसी परिणिति वाले गुरु हैं। भव्य जीवों के लिये ध्यान कैसे किया जाये वो यह बतला रहे हैं- ध्यान करने की प्रक्रिया को समझाते हुये कह रहे हैं कि शरीर से ममत्व हटाकर, खड़े होकर, ध्यान करना कायोत्सर्ग कहलाता है। चारों दिशाओं में तीन-तीन बार घूमना, हाथ जोड़कर सिर झुकाकर नमन करना एवं दो बार ग्वासन में बैठकर प्रणाम करना ध्यान है। यह सामायिक ध्यान है। ध्यान करते समय दृष्टि नासाग्र होनी चाहिये, श्वास गति काबू में होना चाहिये, द्रव्य शुद्ध होना चाहिये (नव देवता, परमेष्ठी) क्षेत्र एकान्त, शांत, अशांति से रहित होना चाहिये, शुभ काल (समय) का ध्यान रखना चाहिए, शुभ भाव, शुद्ध भाव, विशुद्ध भाव होने चाहिये।

ध्यान करने वाले योगी प्रत्येक जीव के प्रति समता भाव रखते हैं, उनकी नजर में न कोई राजा, न कोई रंक, न अमीर, न ही गरीब होते हैं। ध्यानी योगी प्राणी संयम, इंद्रिय संयम का भाव रखते हैं। सम्यक् ध्यान प्राप्त करने हेतु हमें सोलह कारण भावना, बारह भावना, मेरी भावना आदि का भाव रखना चाहिये। पंचमहाव्रत, बारह तप, अणुव्रत आदि से सम्यक् ध्यान में वृद्धि होती है। शुभ भावनायें, सद्भावनायें ये सभी सम्यक् ध्यान वृद्धि के लिये सहायक एवं जरूरी है। अगर हम भावना ही नहीं भायेंगे तो समीचीन ध्यान के बारे में सोचेंगे कैसे? गुरुवर तो हमें इतनी अच्छी ज्ञानवर्धक बातें सिखा रहे हैं और वे प्रयत्न कर रहे हैं कि भव्य जीवों का उद्धार हो जाये।

आत्म तत्त्व की भावना, नेक भावना निर्मल अवस्था को पाने वाली भावना है। संत कहते हैं आर्त्त ध्यान, रौद्र ध्यान आदि समीचीन ध्यान में बाधक हैं। हर घड़ी प्रत्येक जीव किसी न किसी के दुःख में, इष्ट वियोग में, अनिष्ट योग में, क्रोध में जीता है। प्रतिकूल परिस्थिति में घबराना, मनचाहा न मिलना और अपने प्रिय के खो जाने पर गम मनाता है। ये सब परिस्थितियां समीचीन ध्यान के विपरीत हैं। अपने सांसारिक भोगों में फँस कर हम दिन-रात बेचैन रहते हैं, दूसरे और स्वयं के रोगों के बारे में जानकर कष्टों के संबंध में आर्त्त ध्यान करते हैं यही गलत है। समीचीन ध्यान में तो योगी इस सब से ऊपर उठ जाता है। हिंसा, झूठ, चोरी और परिग्रह जैसे रौद्रध्यान को तजना ही योगी की पहचान है।

गुरुवर समझाते हैं कि आर्त्त ध्यान और रौद्र ध्यान को त्यागना चाहिए और धर्म ध्यान को अपनाना चाहिये। मुनियों से संबंधित सामायिक स्तुससितस, वंदना, प्रतिक्रमण आदि श्रावकों के षट्आवश्यक दान आदि धर्म ध्यान हैं। गुरुवर ने धर्मध्यान के चार भेद आगमानुसार बताये हैं। आज्ञाविचय, अपायविचय, विपाक विचय और संस्थानविचय ये चार भेद धर्म ध्यान के हैं।

ध्यान करने के लिए वीतराग शुभ रूप णमोकार-मंत्र आदि पदों का ध्यान करना चाहिये। णमोकार मंत्र तो सब मंत्रों का जनक है यह अनादि है अनादिनिधन मंत्र, पंचनमस्कार मंत्र आदि इस मंत्र के नाम हैं। आचार्य श्री आर्जवसागर जी महाराज की यह रचना जैसे-जैसे पढ़ती जा रही हूँ वैसे-वैसे ऐसा लग रहा है कि आचार्य श्री सामने ही समझा रहे हैं कि ध्यान कैसा होना चाहिये? बहुत-बहुत अभिनन्दन है गुरुवर के चरणों में शत् शत् वंदन है।

ॐ, ह्रीं, अर्हं, ह्राँ, ह्रूँ, ह्रौं, ह्रः ये बीजाक्षर ध्यान लगाने योग बीजाक्षर है सबका अलग-अलग महत्व है। जैसे-

ॐ - पंचपरमेष्ठी का सूचक

ह्रं- जिनेन्द्र स्वरूप वीतराग बुद्ध का सूचक

अर्हं- अरिहंत पद का सूचक

ह्राँ- ये भी अरिहंत पद का सूचक

ह्रीं- सिद्ध भगवान का, ह्रूँ- आचार्य पद का

ह्रौं- उपाध्याय पद का सूचक, ह्रः - साधु पर का सूचक है

इन बीचाक्षर के आगे ॐ लगाकर बाद में नमः लगाकर जाप जपने से कर्मों का क्षय होता है। पंच परमेष्ठी का ध्यान लगाने से भव-भव का बेड़ा पार हो जाता है। आचार्य श्री ने पंच धारणाओं के बारे में स्पष्ट समझाते हुये कहा है कि पृथ्वी धारणा, अग्नि धारणा, वायु धारणा, जल धारणा, तत्त्व धारणा का अभ्यास करने वाला योगी सम्यक् ध्यानी कहलाता है।

धर्म ध्यान करना एक ऐसी कला है जिसके द्वारा हम अपनी निज शक्ति को पहचान सकते हैं। धर्म ध्यान के स्वामी अपनी ध्यान शक्ति को विकसित करते हुये गुणस्थान में चौथे से सातवें गुणस्थान तक पहुँच जाते हैं। ऐसे मुनिराज के ही यह ध्यान संभव है। शुक्ल ध्यान तो केवलज्ञानी का ही विषय है।

कहने का अर्थ है सम्यक् ध्यान अगर पाना है तो ध्यान करने की सारी भावनाओं, अवस्थाओं, धारणाओं को अपने आचरण में उतारना होगा। ध्यान के बलबूते ही, ध्यान से प्रेरणा पाकर जीव चौदहवें गुणस्थान तक पहुँच कर केवलज्ञान को प्राप्त कर लेता है। अयोग केवली नामक चौदहवें गुणस्थान में व्युपरत क्रिया निवृत्ति नामक शुक्ल ध्यान कहा जाता है।

आचार्य श्री आर्जवसागर जी महाराज की यह रचना सूक्ष्म रूप में विस्तृत जानकारी जैसी है। ज्ञान का भण्डार है यह रचना। मुनियों के बारे में वात्सल्यपूर्वक आचार्य श्री बता रहे हैं कि मुनिवर कैसे अपने जीवन में

हमेशा ज्ञानादि, साधना में लीन रहते हैं?

मुनिवर ध्यान, तप, त्याग की मूर्ति होते हैं। मुनिवर के हृदय सागर में ज्ञान की गंगा निरंतर बहती है और वे सांसारिक इच्छाओं से रहित होकर शुद्धोपयोग में, शुद्धात्मा में तल्लीन रहते हैं। समीचीन दृष्टि होते हैं मुनिवर। जब मुनिवर को शुद्धोपयोग की प्राप्ति होती है तभी शुक्लध्यान उत्पन्न होता है और उन्हें केवलज्ञान की प्राप्ति हो जाती है।

आचार्य श्री के अनुसार भगवान आदिनाथ कैलाशपर्वत से, वासुपूज्य भगवान चंपापुर से, नेमिनाथ भगवान गिरनार पर्वत से, महावीर भगवान पावापुरी से मोक्ष गये हैं। इन तीर्थंकर भगवान के साथ अनेक मुनीश्वर भी मोक्ष गये हैं। तो जो ध्यानी, ज्ञानी जीव इनका ध्यान करता है उसका शीघ्र ही बेड़ा पार हो जाता है।

पाँच पाप त्याग कर, पाँच मिथ्यात्व एवं पंचेन्द्रिय विषय से रहित होकर तीन गुप्ति में लीन होना सम्यक् ध्यान को पाने का सर्वोत्तम तरीका है। आचार्य श्री आर्जवसागर जी की लेखनी में भी सरलता है, जैसा नाम वैसा काम गुरुवर का। इस रचना में 113 पद हैं। इन पदों के द्वारा यह समझा देना कि सम्यक् ध्यान के द्वारा केवलज्ञान की प्राप्ति हो सकती है। जरूरत है पुरुषार्थ करने की।

आचार्य श्री ने प्रशस्ति में ग्वालियर नगर के मंदिरों के दर्शन भी पढ़ते-पढ़ते करा दिये जो बहुत सराहनीय एवं प्रशंसनीय है। वीर निर्वाण संवत् पच्चीस सौ चौंतीस के वर्षायोग में आचार्य श्री ने यह काव्य पूरा किया। इस काव्य रचना का मुख्य उद्देश्य भव्य जीवों को मोक्ष मार्ग की राह दिखाना है। सम्यक् दर्शन, ज्ञान और चारित्र को जीवन में उतारते हुए एकमात्र राह मोक्ष के लिये चुननी है। मेरा निजस्वरूप सिर्फ चेतन है जिसका स्वभाव देखना और जानना है, यही ''सम्यक् ध्यान शतक '' का सार है निज में जिनगुण को प्रकट करना है, मोक्षमार्ग की राह को प्रशस्त बनाना है। बस अंत में इतना ही लिखना चाहूँगी और गुरुवर आचार्य श्री आर्जवसागर जी के चरणों में वंदना करना चाहूँगी निम्न लिखित पंक्तियों से-

रत्नत्रय को धारण करना सरल, निभाना कठिन होता है,
संयम पथ की राह बताना सरल, चलना कठिन होता है।
धन्य हैं दिगम्बर मुनिराज जो बाईस परिषय सहते हैं,
इनका किया हुआ हर तप और त्याग स्वयं ही अतिशय होता है।

छोटे से परिचय के शब्दों में बाँध नहीं सकते गुरुवर को जहाँ से विचरण कर जाये गुरुवर वहाँ का कण-कण 'सरल' होता है। आचार्य श्री के चरणों में आकर तो हर जीव का बेड़ा पार होता है। इस आलेख को लिखना मेरा सौभाग्य है, आचार्य श्री के माध्यम से मैंने जैनागम के अनुसार सम्यक् ध्यान के बारे में जाना। आचार्य श्री आगे भी ऐसे कई 'सम्यक् ध्यान शतक', सहस्रनाम जैसी रचनाओं का सृजन करें और उनकी रत्नत्रय साधना निरंतर अनवरत चले वीर प्रभु वे यही प्रार्थना है।

संदर्भ ग्रंथ-

सम्यक् ध्यान शतक, आचार्य श्री आर्जवसागर जी महाराज, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली

समाचार

-सहसंपादकीय
इंजी. बहिन ऋषिका जैन, दमोह

मध्यप्रदेश से राजस्थान होते हुये गुजरात की ओर बढ़े कदम

पिच्छिका परिवर्तन उपरांत इंदौर महानगर के उदयनगर से आचार्य भगवन् श्री 108 आर्जवसागर जी महाराज मुनिराजससंघ के मंगल विहार दिनांक 27 अक्टूबर 2025 को कनाडिया, मोदी जी की नसिया (रत्नमयी प्रतिमा दर्शन), जँवरी बाग की नसिया (भ.पार्श्वनाथ), छावनी मंदिर संयोगितागंज (भ. नेमीनाथ), खातीवाला टैंक (भ.अदिनाथ), पंचबालयति मंदिर से होकर सुखालिया, कुनेड़ी, सनावर होते हुये तपोभूमि उज्जैन की ओर हो गया।

दिनांक 9 नवम्बर 2025 को आचार्य भगवन् ससंघ की मंगल अगवानी तपोभूमि उज्जैन में हुई। जहाँ बड़े ही आकर्षक जिनालय स्थित अति मनोज्ञ प्रतिमाओं के दर्शन कर गुरुसंघ ने अपने को धन्य माना। लगभग 4-5 दिन के अल्प प्रवासोपरांत गुरुवर ससंघ का मंगल विहार उज्जैन की ओर हो गया। दिनांक 25 नवंबर को उज्जैन में अगवानी हुई। उज्जैन नगर के ऋषिनगर में लगभग 8-10 दिन का सान्निध्य देकर जयसिंगपुरा के संग्रहालय होते हुये बोर्डिंग मंदिर, नमक मण्डी (प्राचीन मूर्तियाँ), नयापुरा को 1-2 दिन का अल्प प्रवास देकर आचार्य भगवन् का मंगल विहार नागदा, बड़ावदा, जावरा, दलौदा होते हुये मंदसौर के लिये हो गया। दिनांक 9 दिसंबर 2025 को आचार्य भगवन् श्री आर्जवसागर जी महामुनिराज ससंघ की भव्य मंगल अगवानी मंदसौर में हुई। मंदसौर के 3 दिन के प्रवास के अंतर्गत आचार्य भगवन् ससंघ ने नगर स्थित 7 जिनालयों की वंदना की। तदुपरांत रथयात्रा कार्यक्रम के निमित्त आचार्य भगवन् का विहार बही पार्श्वनाथ के लिये हो गया।

वार्षिक श्रीजी रथयात्रा महोत्सव कार्यक्रम 2025

दिनांक 11 दिसंबर 2025 को गुरुसंघ का मंगल आगमन णमोकार महामंत्र साधना केन्द्र पार्श्वनाथ बही चौपाटी जिला-मन्दसौर (म.प्र.) में हुआ।

वार्षिक श्रीजी की रथयात्रा कार्यक्रम में आचार्य भगवन् ससंघ का मंगल सान्निध्य प्राप्त हुआ; जो कि प्रतिवर्ष श्री 1008 पार्श्वनाथ भगवान एवं श्री 1008 चन्द्रप्रभु भगवान के जन्म-तप कल्याणक के पावन अवसर पर आयोजित होती है।

द्वि-दिवसीय कार्यक्रम के दौरान दिनांक 14 दिसंबर 2025 रविवार को पार्श्वनाथ विधान एवं दिनांक 15 दिसंबर को चन्द्रप्रभु विधान का आयोजन किया गया एवं श्रीजी की भव्य शोभायात्रा भी निकाली गई। इस अवसर पर मंदसौर, नीमच, दलौदा आदि अनेक नगरों से पधारे श्रावक-श्राविकाओं को गुरुवाणी का भी लाभ हुआ। आचार्य श्री ससंघ का एक माह के प्रवास का सौभाग्य बही पार्श्वनाथ क्षेत्र को प्राप्त हुआ। जिसमें व्रतियों सहित सभी धर्मात्माओं ने अनेक कक्षाओं, स्वाध्याय आदि के माध्यम से पुण्यवर्धन किया।

दिनांक 10 जनवरी 2026 को आचार्य भगवन् ससंघ का मंगल विहार बही पार्श्वनाथ से श्री शांतिनाथ दिगंबर जैन अतिशय क्षेत्र बमोतर होते हुये प्रतापगढ़ की ओर हो गया। प्रतापगढ़ में 13 जनवरी को भव्य मंगल

अगवानी हुई एवं आचार्य भगवन् ससंघ ने नगर स्थित 4-5 प्राचीन जिनालयों के दर्शन किये। तदुपरांत 14 जनवरी को गुरुसंघ का मंगल विहार सुहागपुरा (भ. आदिनाथ), पीपलखूँट (भ.अरनाथ), खेमरा (भ. चन्द्रप्रभु भगवान) होते हुये घाटोल की ओर हो गया।

दिनांक 17 जनवरी 2026 को घाटोल नगर के श्री 1008 वासुपूज्य जिनालय बावन डेरी में आचार्य ससंघ की गाजों-बाजों के साथ भव्य अगवानी की गई। जहाँ की अति प्राचीन प्रतिमाओं के दर्शन कर मन प्रफुल्लित हो गया। 4-5 दिन के प्रवासोपरांत गुरुसंघ का मंगल विहार बाँसवाड़ा की ओर हो गया।

आचार्य भगवन् का 12 वाँ आचार्य पदारोहण दिवस एवं आचार्य परमेष्ठी विधान का आयोजन

दिनांक 24 जनवरी 2026 को आचार्यश्री ससंघ की मंगल अगवानी बाँसवाड़ा खांदू कॉलोनी में हुई; जहाँ की मनोज्ञ प्रतिमा महाअतिशयकारी भगवान श्रेयांशनाथ, शीतलनाथ के दर्शन कर गुरुदेव मंचासीन हुये।

श्री दिगंबर जैन दशा नरसिंगपुरा मंदिर कमेटी एवं आचार्य पदारोहण दिवस कार्यक्रम हेतु निवेदन किया गया।

दिनांक 25 जनवरी 2026 को गुरुदेव श्री 108 आर्जवसागर जी महामुनिराज के 12 वें आचार्य पदारोहण दिवस पर गुरु संघ के मुनिराजों द्वारा गुरुदेव की प्रदक्षिणा लगाई गई एवं सकल दिगंबर जैन समाज, खाँदू कॉलोनी के द्वारा संगीतमय आचार्य भगवन की विशेष पूजन विधान गुरु पाद प्रक्षालन आदि कार्यक्रम का आयोजन किया गया। उपस्थित जनसमूह को गुरु मुख से गुरु संस्मरण सुनने का लाभ भी प्राप्त हुआ। 4-5 दिन के अल्प प्रवासोपरांत गुरुसंघ का मंगल विहार वीरोदय तीर्थ क्षेत्र होते हुये बड़ोदिया, नौगामा की (भ. आदिनाथ) ओर हो गया। नौगामा (वागड़ के आदिनाथ) स्थित छोटा सम्मेद शिखर के दर्शन कर गुरुदेव ससंघ बागीदौरा (भ. शांतिनाथ) पहुँचे।

31 जनवरी 2026 को आचार्य श्री ससंघ की मंगल अगवानी बागीदौरा में हुई। अतिशयकारी शांतिनाथ भगवान सहित अनेक प्राचीन जिनबिम्बों के दर्शन करने के उपरांत गुरुवाणी का लाभ भक्तों को प्राप्त हुआ। 4-5 दिनों के अल्प प्रवास के दौरान गुरुदेव के द्वारा ॐ योग ध्यान के माध्यम से ध्यान करना भी सिखाया गया।

दिनांक 5 फरवरी 2026 को गुरुसंघ का मंगल विहार उदयपुरा बड़ा, उम्हदपुरा, कोवा, आनंदपुरी, चीखली (भ. चन्द्रप्रभु), कुआँ, पीठ (भ. शांतिनाथ), बारियाकलाँ, सेमलवाड़ा, भेमापुर, मेघराज होते हुये भीलोडा (गुजरात) की ओर हो गया।

अतिशय क्षेत्र भीलोडा के बावन जिनालय के दर्शन एवं तारंगा सिद्धक्षेत्र पधारने हेतु निवेदन

दिनांक 14 फरवरी 2026 को आचार्य भगवन् श्री आर्जवसागर जी महामुनीराज ससंघ का मंगल आगमन भीलोड़ा स्थित विश्वविख्यात 57 फीट ऊँचे मानस्तंभ वाले अतिशय क्षेत्र (भगवान चन्द्रप्रभु) में हुआ जहाँ स्थित अति प्राचीन अति मनोज्ञ अतिशयकारी जिनबिम्बों के दर्शन हुए। तारंगा क्षेत्र कोठी से पधारी कमेटी द्वारा गुरुचरणों में श्रीफल भेंट कर अष्टाह्निका पर्व में श्री सिद्धचक्र महामण्डल विधान एवं आगामी 2026 के

पावन वर्षायोग हेतु निवेदन किया गया। 14 फरवरी को आचार्य श्री ससंघ का मंगल विहार रेवास, बाड़ौली होते हुये चिंतामणी पार्श्वनाथ अतिशय क्षेत्र से होकर ईडरगढ़ की ओर हो गया।

दिनांक 15 फरवरी को आचार्य संघ की मंगल अगवानी ईडर में हुई। दिनांक 16 फरवरी को गुरुसंघ ने पहाड़ स्थित श्री ऋषभदेव गिरि अतिशय क्षेत्र के जिनालयों के एवं सुमतिनाथ जिनालय के दर्शन किये। आदीश्वर प्रभु जिनमंदिर से आचार्य श्री ससंघ की आहारचर्या संपन्न हुई। आहारचर्या उपरांत श्री विद्यासागर तपोवन तारंगा जी सिद्धक्षेत्र कमेटी द्वारा गुरु चरणों में पधारने हेतु निवेदन किया। उपरांत वैरावल, हडौल होते हुये तारंगा जी की ओर विहार हो गया।

विद्यासागर तपोवन तारंगा जी में मनाया समाधि दिवस

दिनांक 18 फरवरी 2026 को तपोवन (वासुपूज्य जिनालय) में आचार्य भगवन् श्री 108 आर्जवसागर जी महामुनिराज ससंघ के मंगल सान्निध्य में आचार्य भगवन् श्री 108 विद्यासागर जी महाराज का द्वितीय समाधि दिवस बड़े ही धूमधाम से आचार्य परमेष्ठी विधान पूर्वक मनाया गया। इस अवसर पर गुरुदेव के मुखारविंद से गुरु संस्मरण सुनने का लाभ भी प्राप्त हुआ। विधान का आयोजन ब्र. सुनील भैया जी के निर्देशन में किया गया।

श्री सिद्धचक्र महामण्डल विधान का आयोजन श्री दिगम्बर जैन सिद्धक्षेत्र कोठी, तारंगा जी (गुजरात)

दिनांक 20 फरवरी 2026 को आचार्य भगवन् ससंघ की भव्य मंगल अगवानी बड़ी ही हर्षोल्लास पूर्वक कोठी मंदिर में की गई। असंभव कार्य को संभव करने वाले महान अतिशयकारी श्री संभवनाथ भगवान के दर्शन कर गुरुवर ससंघ मंचासीन हुये। पुनः श्री दिगंबर जैन प्रबंधकारिणी कमेटी द्वारा श्रीफल भेंट कर सिद्धचक्र मण्डल विधान एवं आगामी चातुर्मास हेतु निवेदन किया गया।

दिनांक 24 फरवरी से 4 मार्च 2026 तक आचार्य श्री आर्जवसागर सभामण्डप, तारंगा जी कोठी में गुरु सान्निध्य में पं. शैलेन्द्र जी, कटनी के निर्देशन में श्री सिद्धचक्र महामण्डल विधान के ध्वजारोहण का आयोजन किया गया।

विधान के दौरान आचार्य भगवन् की दिव्य देशना का लाभ भी भक्तों को प्राप्त हुआ जिसमें गुरुदेव ने अहिंसा, शिक्षा, संस्कार आदि के साथ-साथ सम्यग्दर्शन पर विशेष प्रवचन दिया। सायं काल में प्रभु आरती उपरांत विद्वानों के प्रवचन का लाभ भी लोगों को प्राप्त हुआ। विधान के अंतिम दिन श्रीजी के विमानोत्सव का आयोजन गुरु सान्निध्य में सानंद संपन्न हुआ एवं अभूतपूर्व धर्म प्रभावना हुई।

दिनाँक 8 मार्च 2026 को आचार्य भगवन् ससंघ का मंगल विहार तारंगा जी सिद्धक्षेत्र से बाव, आदरी कम्पा, वराली, अतिशय क्षेत्र देरोल (पार्श्वनाथ), विजयनगर (आदिनाथ) बागलबाड़ा (आदिनाथ), अतिशय क्षेत्र खुणादरी (भ. आदिनाथ की प्राचीन प्रतिमा), भाणदा अति. क्षेत्र वर्द्धमाननगर चित्तौड़ा छाणी, खेरवाड़ा, केसरिया जी होते हुये उदयपुर की ओर हो गया।

RNI Reg No MPHIN/2007/27127 ISSN: 3048-9954 (Print)

प्रति

आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज के समाधि दिवस के उपलक्ष्य में तपोवन तारंगा जी में आयोजित कार्यक्रम के दौरान गुरु पाद प्रक्षालन।

ईडरगढ़ पधारी सिद्धक्षेत्र तारंगा स्थित विद्यासागर तपोवन की कमेटी सहित व्रतीगण गुरुदेव से पधारने हेतु निवेदन करते हुये।

अतिशय क्षेत्र देवपुरी देरोल के पार्श्वनाथ भगवान के दर्शन करते हुए आचार्य भगवन् ससंघ।

ईडरगढ़ अतिशय क्षेत्र की सुमतिनाथ जिनालय हेतु पहाड़ वंदना करते हुये गुरुदेव ससंघ।

आचार्य भगवन् का तारंगा जी में आशीर्वाद ग्रहण करते हुये कुबेर इन्द्र सपरिवार एवं उमेश तनेजा गुड़गाँव।

तारंगा जी के प्रवास के दौरान स्वाध्याय कराते हुये आचार्य भगवन् श्री आर्जवसागर जी महाराज।

आचार्य भगवन् के दर्शन करती हुई आर्यिका पवित्रमति माताजी ससंघ एवं आर्यिका सुदृढ़ मति माताजी ससंघ।

स्वामी एवं प्रकाशक : श्रीमती सुषमा जैन द्वारा मुद्रक : पवन कुमार जैन मो.:9826240876 द्वारा पारस प्रिन्टर्स, 207/4, सांईबाबा काम्पलेक्स, जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल से मुद्रित एवं एमआईजी-8/4, गीतांजली काम्पलेक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित।
सम्पादक - डॉ. अजित कुमार जैन, MIG-8/4, गीतांजली काम्प्लैक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल-462003 फोन : 7222963457, 9425601161

मंदसौर में आचार्य भगवन् की दिव्य देशना सुनते हुये धर्मप्रेमी बंधुगण।

घाटौल की महाअतिशयकारी भगवान वासुपूज्य की प्रतिमा सहित अन्य प्राचीन प्रतिमाओं के दर्शन करते हुए गुरुदेव श्री आर्जवसागर जी महाराज।

श्री शांतिनाथ अतिशय क्षेत्र, प्रतापगढ़ में जैनागम संस्कार के गुजराती संस्करण का विमोचन करते हुए मुनिश्री भाग्यसागर जी के पूर्वावस्था के जन।

जावरा में मंचासीन आचार्य भगवन् श्री 108 आर्जवसागर जी महामुनिराज ससंघ।

उज्जैन स्थित नमक मण्डी जिनालय में गुरुदेव के प्रवास हेतु श्रीफल भेंट कर निवेदन करते हुये बिलाला जी आदि।

उज्जैन के जैन संग्रहालय में स्थित अनेक प्राचीन जैन मूर्तियों का अवलोकन करते हुए गुरुदेव श्री आर्जवसागर जी महाराज ससंघ।

उज्जैन के ऋषिनगर में गुरुदेव की भक्तिभाव पूर्वक पूजन करते हुये श्रावकगण।

बागड़ के बड़ेबाबा भगवान आदिनाथ की शांतिधारा कराते हुये आचार्य परमेष्ठी श्री आर्जवसागर जी महामुनिराज।

विशेष उपलब्धियां

धर्म प्रभावक

आचार्य श्री 108 आर्जवसागर जी महाराज

को उनके आध्यात्मिक, साहित्यिक एवं मानवीय योगदान हेतु देश-विदेश की अनेक प्रतिष्ठित संस्थाओं द्वारा सम्मानित किया गया है।

मानद उपाधियाँ (Honorary Degrees)

1. Doctorate of Philosophy(D.Phil.)-Chania International University, Greece
2. Doctorate of Literature (D.Litt.)- America International University.

विशेष सम्मान एवं पुरस्कार

3. अहिंसा के दूत सम्मान
4. जैन धर्म के गौरव रत्न सम्मान
5. अहिंसक प्रचारक सम्मान
6. आध्यात्मिक संत सम्मान
7. आध्यात्मिक विज्ञान के ज्ञाता सम्मान
8. साहित्यिक प्रतिभा सम्मान
9. 20 वीं सदी के हिंदी साहित्य के सर्वोच्च शिखर सम्मान
10. विश्व के भगवान सम्मान
11. करुणा के सागर सम्मान
12. अहिंसा के पुजारी सम्मान
13. तमिल देश के उद्धारक संत
14. महावीर प्रतिमूर्ति
15. विद्या गुरु से दीक्षित बुंदेलखण्ड के प्रथमाचार्य
16. बहुभाषाविद् आचार्य
17. वर्ल्ड गॉड
18. चारित्र शिरोमणि
19. भारत के दयालु संत
20. स्वर्ण भारत सम्मान
21. राष्ट्रीय प्रतिष्ठा पुरस्कार
22. भारतीय रत्न अवार्ड
23. पद्म श्री गौरव सम्मान
24. भारत गौरव रत्न
25. भारत प्रतिभा सम्मान
26. नेशनल अवार्ड
27. प्रेरणा सम्मान
28. भारतीय उत्कृष्टता सम्मान
29. नव भारत सेवा रत्न सम्मान
30. ग्लोबल अचीवर्स अवार्ड
31. अंतर्राष्ट्रीय उत्कृष्टता पुरस्कार
32. समाज सेवा आदर्श रत्न पुरस्कार
33. विजीनरी लीडर अवार्ड
34. विजय रत्न सम्मान
35. विद्या रत्न सम्मान
36. पीएम मोदी विजन ऑफ भारत अवार्ड
37. श्रेष्ठ रत्न सम्मान
38. भारत स्वाभिमान
39. विजय गौरव सम्मान,
40. स्टार ऑफ द ग्लोब अवॉर्ड
41. अखंड भारत सम्मान
42. राष्ट्रीय गौरव सम्मान
43. महात्मा गाँधी राष्ट्रीय पुरुस्कार
44. एपीजे अब्दुल कलाम नेशनल अवार्ड
45. स्वामी विवेकानंद प्रेरणा सम्मान
46. डॉ. भीमराव अंबेडकर नेशनल अवार्ड
47. उज्जवल भारत पुरस्कार
48. इंडिया प्राइड इन एजुकेशन पुरस्कार
49. सद्भावना सेवा सम्मान
50. वर्ल्ड टैलेंट अवार्ड
51. ग्लोबल प्रतिष्ठित अवार्ड
52. इंटरनेशनल स्टार अवार्ड
53. राइजिंग भारत स्टार अवार्ड
54. लाइफ टाइम अचीवमेंट अवार्ड
55. द्रोपदी मुर्मू प्रेसिडेंशियल ऑनर फॉर सोशल जस्टिस
56. भारत के प्रभावशाली संत

अन्य प्रमुख सम्मान

- शिक्षा, समाज सेवा एवं आध्यात्मिक क्षेत्र में उत्कृष्ट योगदान हेतु अनेक राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं द्वारा अनेक अवसरों पर सम्मानित।
- विभिन्न देशों- युएसए, यूके,यूएन, लंदन, तमिलनाडु आदि में आध्यात्मिक साहित्यिक विधा की कला के माध्यम से उच्च स्तर पर सम्मानित।

विशेष टिप्पणी- आचार्यश्री का जीवन समर्पण, साधना और सेवा का अद्वितीय उदाहरण है। उनके द्वारा किए गए कार्य राष्ट्रीय समाज जन के लिए है।